धर्म दर्शन विज्ञान प्रवेशिका भाग - 1

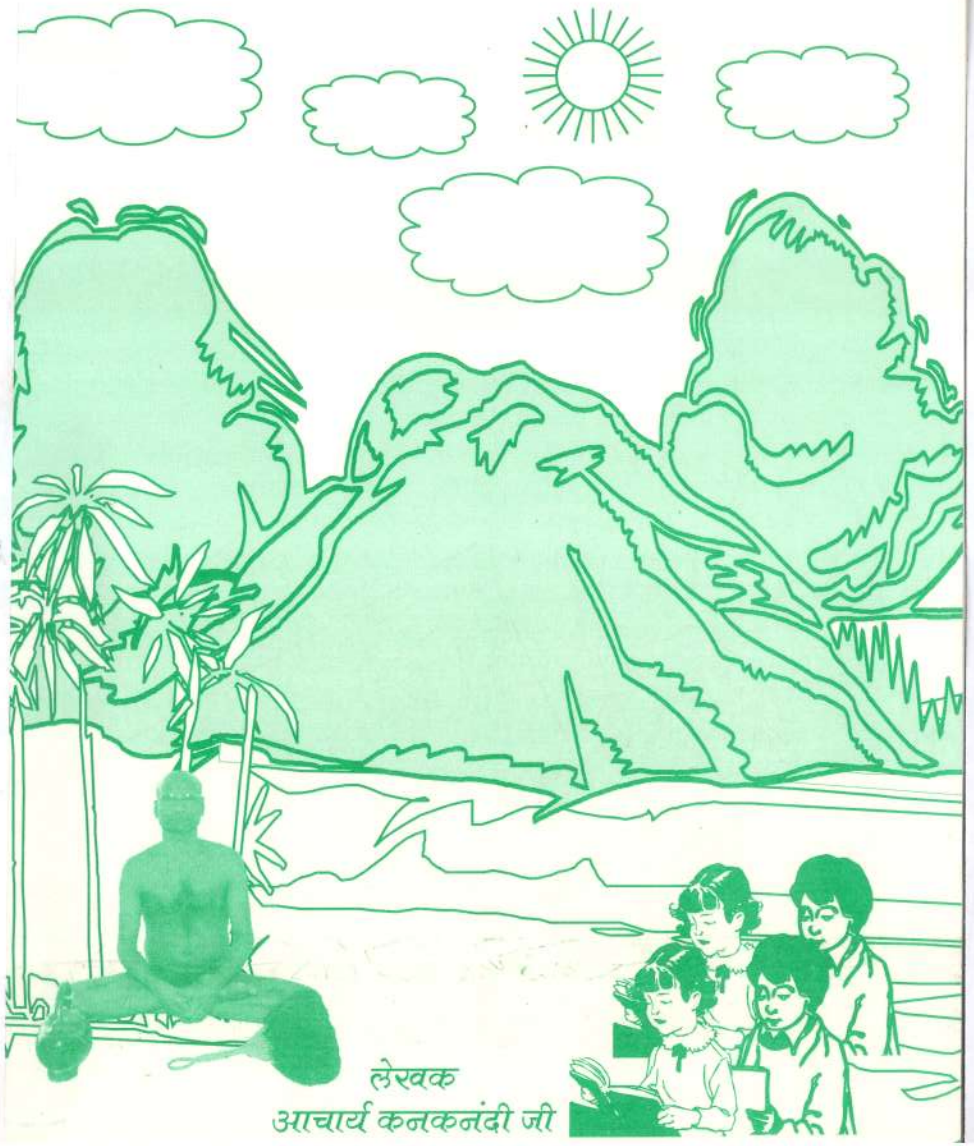

लेखक
आचार्य कनकनंदी जी

षष्टम् अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी (तेरापंथ भवन-उदयपुर-2004) में आ. कनकनन्दी ससंघ, आ. कुशाग्रनन्दी ससंघ, मुनि धर्मनन्दी ससंघ के पिच्छी परिवर्तन का एक दृश्य।

षष्टम् अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी (तेरहपंथी भवन उदयपुर-2004) में आ. कनकनन्दी ससंघ आ. कुशाग्रनन्दी ससंघ, श्रमणियाँ (आचार्य महाप्रज्ञ)

पावन मुनि दीक्षा एवं मंगल वर्षायोग-उदयपुर शहर (2005) की मधुर स्मृति में प्रकाशित

धर्म दर्शन विज्ञान प्रवेशिका

(पुष्प - प्रथम)

लेखक

वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदी जी गुरुदेव

प्रकाशक

धर्म दर्शन विज्ञान शोध संस्थान (बडौत)

धर्म दर्शन सेवा संस्थान (उदयपुर) ग्रंथाङ्क -31

सप्तम संस्करण - 2005

प्रतियाँ - 1000

मूल्य - 15.00/- रुपये

मुद्रक - जैन प्रिन्टर्स, उदयपुर फोन : 2425843

द्रव्यदाता / ज्ञानदाता

1) सुशीला देवी धर्मपत्नी श्रीमान् अमरचंदजी जैन, तथा सुपुत्र नरेन्द्र, ललीत, महावीर, विजया जैन, 6 गौतम गली-उदयपुर (राज.)

2) ब्रह्मचारीणी मंजु जैन, पहाडी धीरज, दिल्ली-6

विषय-सूची

अध्याय		पृ.सं.
	ना, जैन ध्वजगीत, संकल्प, जय-घोष, ती वन्दना)	6-13
(प्रा सर	इष्ट प्रार्थना	14-18
1.	I. नमस्कार मंत्र महात्म्य	
	II. मंगल दण्डक	
	III. उत्तम उण्डक	
	IV. शरण दण्डक	
	पवित्र भावना	19-21
2.	I देवदर्शन विधि	22-27
3.	II देव दर्शन तथा पूजा का फल	
	III दर्शन स्तोत्र	
	धर्म प्रवर्तक तीर्थंकर	28-34
4.	24वें अन्तिम तीर्थंकर वर्द्धमान	35-37
5.	दीपावली	38-40
6.	आहार दान विधि	41-46
7.	आर्दश जीवन	47-50
8.	जैन धर्म प्रवेशिका (सम्यक्दर्शन पाठ)	51-53
9.	सम्यक्ज्ञान पाठ	53-54
10.	सम्यक् चारित्र पाठ	54-55
11.	सामान्य ज्ञान प्रश्नोत्तरी	55-56

आशीर्वाद

विशेष प्रसन्नता की बात है कि बालकोपयोगी छोटी-छोटी पुस्तकें उनके शिक्षण के लिए लिखकर छप रही हैं, इन पुस्तकों के लेखक आचार्य कनकनंदी जी हैं, वे विशेष परिश्रम कर रहे हैं, उन पुस्तकों से बालक विशेष शिक्षा प्राप्त करेंगे व नैतिक शिक्षा प्राप्त करेंगे। वर्तमान में बालकों पर संस्कार डालना परमावश्यक है, उनको धार्मिक ज्ञान प्राप्त होना जरुरी है। आगे जाकर बच्चों पर ही धर्म का भार है, उन्हीं को धर्म चलाना है, उनको शिक्षित करना परम आवश्यक है। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए 'धर्म दर्शन विज्ञान प्रवेशिका' तैयार की गयी है। आशा है आप अवश्य लाभान्वित होंगे। लेखक व प्रकाशक एवं द्रव्यदाता और ज्ञान प्राप्त करने वाले बच्चों को मेरा आशीर्वाद।

गणधराचार्य कुन्थुसागर

कषाय रहित भाव की पवित्रता ही वस्तुतः अहिंसा है। परंतु स्वयं को अहिंसा के अनुयायी मानने वाले भी अधिकांश व्यक्ति ईर्ष्या, द्वेष, तृष्णा, घमंड, नाम-ख्याति, पूजा-लाभ से ओत-प्रोत रहते हैं और जिससे आनुसांगिक रूप से भी एकेन्द्रिय जीव की द्रव्य हिंसा हो जाती है उसे हिंसक, पापी मानकर उससे घृणा करते हुए और भी हिंसा रूपी सागर में बेसहारा डूबते जाते हैं।

—आ. कनकनंदीजी गुरुदेव

शुभाशीर्वाद

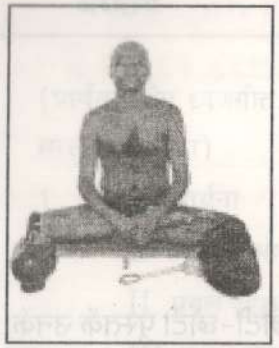

विश्व में सर्वश्रेष्ठ प्राणी मनुष्य है, क्योंकि मानव अपने विवेक, पुरुषार्थ, ज्ञान-विज्ञान से स्वयं को सुसंस्कृत करके उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर पहुँच सकता है। केवल बड़ी- बड़ी अट्टालिकायें, भोगोपभोग की सामग्रियों की उपलब्धि से कोई भी समाज, धर्म, राष्ट्र महान् नहीं बन सकता है। समाजादि को महान् बनाने के लिए महान् व्यक्तित्व वाला मानव चाहिए। क्योंकि महान् व्यक्तियों की समिष्टि से महान् समाज बनता है एवं महान् समाज के समूह से महान् राष्ट्र बनता है। महान् राष्ट्र के समूह से महान् अखिल मानव समाज (पृथ्वी/विश्व) का संगठन होता है। इसलिये व्यक्ति निर्माण ही समाज, राष्ट्र, अन्तर्राष्ट्र का निर्माण है। अभी देश, राष्ट्र अन्तर्राष्ट्र के निर्माण की बुलन्द आवाज हर क्षेत्र से आ रही है परन्तु मानव निर्माण की ओर किसी का भी विशेष लक्ष्य नहीं है। अतः देशादि को योग्य, प्रगतिशील, सुसंस्कृत बनाना है तो पहले व्यक्ति-निर्माण के कार्य को प्रथम एवं प्रधान स्थान देना चाहिये। जैसे-दीपक स्वयं प्रकाशित होकर दूसरों को प्रकाशित कर सकता है वैसे ही मनुष्य स्वयं सुसंस्कृत, आदर्शवान् होकर दूसरों को सुसंस्कृत-आदर्श बना सकता है। आइये, आगे बढ़े ! पहले स्वयं को सुसंस्कृत करने के लिए मानव सुसंस्कृत बने, इस उद्देश्य से हमने इस पुस्तक की रचना की है। यदि एक भी महानुभाव, बालक इसको पढ़कर अपने जीवन को आदर्श बनावे तो मेरा पुरुषार्थ सफल होगा। जैसे बीज भविष्यत् कालीन अंकुर, वृक्ष है, उसी प्रकार आज का बालक भविष्य का नागरिक एवं राष्ट्र नायक है अर्थात् आज का बालक कल का पालक है। अंग्रेजी में एक कहावत है कि-

Child is the father of man.

बच्चा मनुष्य का पिता है। इसका भावार्थ यह है कि बच्चा मनुष्य समाज का जनक, महत्त्वपूर्ण इकाई, कर्णधार, भविष्य की धरोहर, उन्नायक है। इसलिये बालकों को सभ्य, सुसंस्कृत उन्नत बनाना मानों व्यक्ति, समाज, परिवार, राष्ट्र, धर्म, सभ्यता, संस्कृति को उन्नत बनाना है। इसलिए सर्व उन्नति के मूल

कारण स्वरूप बालकों को सभ्य, विनयशील, सुसंस्कृत, ज्ञानी, धीर-वीर, देशभक्त, कर्त्तव्यनिष्ठ, अनुशासन-प्रिय, समयानुबद्ध, देव-शास्त्र गुरु-भक्त, माता-पिता के आज्ञाकारी, त्यागी, धर्मपरायण बनाना, माता-पिता, अभिभावक, गुरुजन एवं राष्ट्र के सर्वोपरि नैतिक कर्तव्य है। इस उद्देश्य को लेकर मैं बाल्यावस्था से ही बच्चों को महत्त्व देता आया हूँ। विद्यार्थी अवस्था में मैं खुद पढ़ता था एवं अन्य विद्यार्थियों को निःशुल्क ट्यूशन पढ़ाता था। इसी प्रकार साधु जीवन में भी बच्चों को पढ़ाता हूँ, उनके लिए शिविर लेता हूँ, प्रोत्साहन देने के लिए पुरस्कार भी देता हूँ। इतना ही नहीं, बच्चों को प्रायोगिक उत्साह देने के लिए एवं आगे बढ़ाने के लिए उनसे ही पड़गाहता हूँ, उनसे ही पूजा करवाता हूँ व आहार लेता हूँ।

आधुनिक बच्चों को आधुनिक परिवेश में शिक्षा देने के लिए, शिविर में प्रशिक्षण देने के लिए, धार्मिक स्कूल में पढ़ाने के लिए सरल, तुलनात्मक, वैज्ञानिक कारण सहित इस ''धर्म दर्शन विज्ञान प्रवेशिका'' पुस्तक की रचना की गई है। वस्तुतः यह पुस्तक ''धर्म ज्ञान विज्ञान'' का परिवर्तित-परिवर्धित नवीन सप्तम संस्करण ही है। धर्म, ज्ञान एवं विज्ञान को जैन-अजैन, शिक्षित-व्यक्ति अधिक पसन्द करने के कारण उसका अंग्रेजी में अनुवाद हो चुका है। उसका नाम "PHILOSOPHY OF SCIENTIFIC RELIGON" है। उस 'धर्म, ज्ञान एवं विज्ञान' से बहु अंश लेकर बच्चों के योग्य कुछ अन्य विषय जोड़कर इस पुस्तक का नवीनीकरण किया गया है। इस पुस्तक के मुद्रण का आर्थिक भार जिन्होंने उठाया है वे सब धन्यवाद के पात्र है। द्रव्यदाता, सहायक, अखिल जीव-जगत् तथा बच्चों के लिए मेरा आशीर्वाद है। सबकी बुद्धि उत्तरोत्तर धर्म में वृद्धि हो, स्व-पर, देश-जाति, इहलोक-परलोक में उन्नति करते हुए शाश्वतिक मोक्ष-सुख प्राप्त करें इन भावनाओं के साथ-

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामय।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद्दुःखभाग् भवतु॥
'बच्चे हैं देश की जान, शिक्षा ही है उनकी शान।'

आचार्य कनकनंदी

जैन ध्वज गीत

आदि ऋषभ के पुत्र भरत का, भारत देश महान्।
ऋषभ देव से महावीर तक, करे सुमंगल गान॥
पंचरंग पांचों परमेष्ठी, युग को दे आशीष।
विश्व शांति के लिए झुकाएँ, पावन-ध्वज को शीष॥
'जिन' की ध्वनि, जैन की संस्कृति,
अघ जग को वरदान, भारत देश महान्॥1॥

सत्य, अहिंसा धर्म जगत का, हे आदर्श महान्।
दया, क्षमा सम भाव बढ़ाने, गाओ ध्वज गुणगान॥
धर्म की गाथा, शान्ति के दाता,
जन मन का अभिराम, भारत देश महान्॥2॥

अनेकांत की ज्योति जगाकर, तम मिथ्यात्व हटाता।
स्याद्वाद का पाठ पढ़ाकर, आगम मार्ग दिखाता॥
यही महिमा, यही गरिमा,
जन गण का कल्याण, भारत देश महान्॥3॥

संस्कार, सदाचार, सद्विचार को अपनाना और इसका प्रचार-प्रसार करने रूप प्रभावना को छोड़कर ईंट-पत्थर को इकट्ठा करना (भवन निर्माण आदि), धन का संग्रह करना तथा हाथी-घोड़ा आदमिओं की भीड़ लगाना रूपी प्रभावना करते हैं तब मेरी विवशता और चिंता बढ़ जाती है।

— आ. श्री कनकनंदी जी गुरुदेव

प्रार्थना

(तर्ज- चंदन है इस देश की .....)

पावन है इस देश का कण-कण, मोक्षपुरी का धाम है।
हर कन्या सीता सुन्दरी, बालक वीर महान् है।
जहाँ संत जन तपो भूमि में, अध्यातम पर शोध करें।
भौतिकता से ऊपर उठकर, निज आतम की खोज करें।
जहाँ धर्ममय प्रातः बेला, अध्यातम की शाम है। हर कन्या सीता.....।

अकलंक-निकलंक परम प्रतापी महाधुरंधर वीर जहाँ।
लक्ष्मी बाई वीर शिवाजी जैसे दिग्गज शेर यहाँ-२
हँसते-हँसते धर्म देश प्रति, करते निज बलिदान हैं। हर कन्या.....।

'सत्यमेव जयते' नारे को, मरते दम तक गाते हैं,
सत्य धर्म की सेवा में नित अपना शीश झुकाते हैं।
हर प्राणी की रक्षा करना हर मानव का काम है। हर कन्या.....।

सत्य प्रेम और शांति का, हम देते सबको नारा हैं,
सत्य अहिंसा इस भारत का बड़ा अनोखा नारा है-२
अनेकांत में एकता यह भारत की पहचान है। हर कन्या.....।

महानता का प्रतीक है ''सादा जीवन उच्च विचार''। 'सादा जीवन नीच विचार' या 'विलासी जीवन उच्च विचार' महानता में बाधक हैं।

❊❊❊❊❊

वचन अन्तरंग भावों का वाचक हैं। दुर्वचन बोलकर अपना अन्तरंग दुराचार को प्रगट करके अपनी दुर्गति को निमंत्रण मत दो।

संकल्प

हमें सत् विश्वास सच्चा विज्ञान एवं सच्चारित्र के बल पर अंधविश्वास, मिथ्याज्ञान एवं भ्रष्टाचार का विनाश करते हुए स्व-पर, राष्ट्र, विश्व का विकास करते हुए विश्व को पवित्रमय एवं शांतिपूर्ण बनाना है। विश्व हमारा परिवार है, परमात्मा हमारे पिता हैं, सरस्वती हमारी माता है एवं सम्पूर्ण प्राणी हमारे बन्धु हैं। अतः सबकी सेवा, सबकी रक्षा एवं सबकी समृद्धि हमारा लक्ष्य, हमारा कर्त्तव्य हमारा धर्म है।

सत्यमेव जयते!

सुज्ञान का विकास हो-कुज्ञान का विनाश हो-2

भ्रष्टाचार का विनाश हो-विश्व का कल्याण हो-2

1- जिनवाणी-सरस्वती वंदना

-आर्यिका क्षमाश्री

विश्व में सत्य का प्रकाश हो
माँ भारती की वंदना करो।
गुरु कृपा सदा ही साथ साथ हो।
गुरुदेव की सुवंदना करो।।

विश्वमैत्री भावना उदारता हृदय धरें।
सत्य के लिए जिएँ और सत्य के लिए मरें।
सत्य साम्य शांति पाने हम कदम बढ़ायेंगे।
एक साथ आगे बढ़ के विश्व-क्रांति लायेंगे।
हिंसा भ्रष्टाचार का विनाश हो।। माँ भारती....

मन में अनेकांतवाद शब्द में हो स्याद्वाद।
तोड़ना है हमको सारी रूढ़ियाँ व पंथवाद।
वीर की महानता और राम सी हो धीरता।
बापू जैसी राजनीति राणा जैसी वीरता।
आईन्स्टीन जैसा शोध ज्ञान हो।। माँ भारती....

कनकनंदी की कनकता स्वर्ण सी चमक रही।
जिनसे प्रवर प्रखर ज्ञान रश्मियाँ निकल रहीं।
धर्म दर्शन ज्ञान की सभा यहाँ है लग रही।
हो गुरु की भावना सफल हो कामना यही।
विश्व में पुण्य का प्रभात हो।। माँ भारती....

2-होगा सत्य उजेरा

– मुनिश्री गुप्तिनंदीजी

(तर्ज-जहाँ डाल-डाल.....)

धर्म दर्श विज्ञान सभा में होगा सत्य उजेरा
आया अवसर आज सुनहरा-2
जहाँ सत्य कसौटी पर कसना है धर्म का इक इक पेरा
आया अवसर आज सुनहरा-2

हम धर्म दर्शन-विज्ञान मिलाकर नयी राह अपनायें।
अध्यात्म सहित नवचिंतन से शांति के सूत्र बनायें।। शांति के....
नित उभय पक्ष के समायोग से मिटे पाप तम गहरा।। आया अवसर....

यहाँ हिन्दी चीनी, देश विदेशी औपनिवेशक आओ।
हे संत महंत महाबली श्रीमान् सत्य गवेषक आओ। सत्य....
यहाँ अनेकांत सापेक्षवाद का लगे सभी पर पहरा।। आया अवसर....

यहाँ लिंकन, गाँधी, रेडक्रास सा विश्व प्रेम अपनाना।।
ओ रमन कनक आईन्स्टीन सा सत्य शोध है पाना। सत्य....
यहाँ प्राणी मात्र की प्रगति शांति का रहे विचार हमारा।। आया अवसर....

जय घोष

1. आज क्या है ? = शिविर का शुभारंभ
2. शिविर किसका? = धर्म दर्शन विज्ञान प्रशिक्षण का
3. देश के गौरव = आदर्श बच्चे
4. अधिकार से महान् = कर्त्तव्य पालन
5. अन्धकार क्या है ? = अज्ञानता
6. दूर भगाओ दूर भगाओ = अज्ञानता को दूर भगाओ
7. बच्चों की उन्नति = देश की उन्नति
8. महापाप क्या है? = अन्ध-विश्वास
9. बच्चों का निर्माण = राष्ट्र का निर्माण
10. बच्चों के निर्माता = सच्चे गुरू
11. अहिंसा धर्म = विश्व धर्म
12. उदार धर्म = अनेकान्त धर्म
13. सत्यमेव = जयते
14. वन्दे = वीरो
15. सत्य, अहिंसा प्यारा है = यही हमारा नारा है
16. जैन धर्म का दिव्य संदेश = जीओ ओर जीने दो
17. अहिंसा परमो धर्मः = यतो धर्म ततो जयः
18. अहिंसा धर्म = जैन धर्म

भोजन मंत्र

ॐ ह्रीं सत्यसाम्यसुखाय नमो नमः

(भोजन के पहले 3 बार बोलें)

प्रार्थना

हे वीर! विश्व को, आज शान्तिमय कर दो।
जग-भर में फिर से, पूर्ण अहिंसा भर दो।।

(1)

अत्याचारों की घोर घटा घिर आई।
मानव ने निज-मानवता आज भुलाई।।
कर रहे घोर अन्याय महा अन्यायी।
लड़ रहे हाय! आपस में भाई-भाई।।
सोई मानवता जगे मन्त्र वह भर दो।
जग भर में फिर .....।।

(2)

हम वीर तुम्हारे बालक वीर कहायें।
निज देश धर्म हित, अपना खून बहायें।।
अनुचित बन्धन को तोड़ मुक्त हो जायें।
जो अलग हो रहे उनको फिर अपनायें।।
कर सकें संगठन यही एक बस वर दो।
जग भर में फिर से .....।।

(3)

लव-कुश समान हम, वीर बनें बलधारी।
श्री वर्द्धमान सम, आज बनें ब्रह्मचारी।।
हो रामचन्द्र सम नीति-निपुण अधिकारी।
फिर महक उठे भारत की यह फुलवारी।।
इस दुःखित देश को राम-राज्य सम कर दो।
जग भर में फिर .....।।

विद्यार्थियों (शिविरार्थी) के नियम

1) प्रत्येक विद्यार्थी कक्षा (शिविर) में सम्पूर्ण अनुशासन को स्वेच्छा से पालन करेंगे। एक दूसरे को अनुशासित नहीं करेंगे।

2) निर्धारित अनुशासन एवं कार्यक्रम को स्वेच्छा से समय पर करेंगे।

3) पूर्व निर्धारित अनुशासन एवं कार्यक्रम में यदि परिवर्तन की आवश्यकता होगी तो सूचना पूर्वक परिवर्तन किया जाएगा। जब तक सूचना नहीं की जाती है पूर्व निर्धारित अनुशासन एवं कार्यक्रम के अनुसार ही अपना कत्तर्व्य पालन करना अनिवार्य है। अनुशासन एवं कार्यक्रम की सूचना बार-बार नहीं दी जायेगी।

4) विद्यार्थी मद्य, मांस, धूम्रपान, तम्बाकू, गुटकादि नशीलीवस्तु, नेल पालिश, लिपस्टिक, पाउडर, बेल्ट, जूते, चप्पल, अश्लील, अभद्र वस्तुओं का सेवन नहीं करेंगे/प्रयोग नहीं करेंगे।

5) बड़ों के साथ सम्मान पूर्ण एवं छोटों के साथ प्यार पूर्ण नम्र, सरल, भद्र व्यवहार करेंगे।

6) शिक्षा, ज्ञान, धर्म, कक्षा, शिविर सम्बंधी, चर्चा को छोड़कर अन्य सम्पूर्ण चर्चाओं का त्याग करेंगे।

7) कक्षा, शिविर सम्बंधी आवश्यक उपकरण, आवश्यक समय में स्वयं के पास अवश्य रखेंगे। यथा-कक्षा के साहित्य नोट-बुक, पेन आदि।

8) प्रत्येक कार्य में प्रत्येक विद्यार्थी स्वावलम्बी रहेंगे। यथा-सफाई, दरी बिछाना, घंटी बजाना, गुरूओं के लिये तखत, पाटा, चौकी आदि लगाना, स्वल्पाहारादि का परोसना, जूठन की सफाई करना आदि।

9) प्रयोग-धर्मा बनने के लिए विद्यार्थी (शिविरार्थी) द्वारा आहारदान के लिए स्वयं शुद्ध आहार बनाकर (चौका लगाकर) साधुओं को आहार देना।

10) प्रायोगिक पूजा करने के लिये निर्धारित पूजा-कार्यक्रम में स्वयं विद्यार्थी अपने-अपने घर से पूजा की समस्त सामग्री लेकर आयेंगे।

11) गुरूदेव के निर्देशानुसार कार्यक्रम के विभिन्न उत्तरदायित्व विभिन्न विद्यार्थी वहन करेंगे।

12) प्रत्येक कार्यक्रम के लिए अंक प्राप्त होंगे। यह अंक परीक्षा अंक में

सम्मिलित होगा। अनुशासन भंग करने पर अंक कम किया जायेगा। जिसे परीक्षा अंक से घटा दिया जायेगा।

13) विद्यार्थी (शिविरार्थी) को निर्धारित समय पर प्रवेश प्राप्त कर लेना अनिवार्य है। सांस्कृतिक कार्यक्रम में भी जो भाग लेने वाले हैं वे भी निर्धारित समय पर प्रवेश प्राप्त कर लेंगे।

14) जो अनुशासन भंग करेंगे उन्हें बहिष्कार कर दिया जायेगा तथा प्राप्त सुविधाओं से भी वंचित किया जायेगा।

15) योग्य विद्यार्थी को प्रोत्साहित करने के लिए पुरस्कार के रूप में ज्ञान-उपकरण (साहित्य आदि) दिया जायेगा। परन्तु अयोग्य को नहीं दिया जायेगा। पुरस्कार स्वेच्छा से दिये जाने के कारण पुरस्कार के लिए प्रतिवादादि नहीं करेंगे।

16) शिविरादि के कार्यक्रम में यदि कोई विशिष्ट व्यक्ति को आना है तो उन्हें भी शिविर के अनुशासन को पालन करना पड़ेगा।

17) कक्षा, शिविरादि के लिये जो सज्जन आर्थिक (साहित्य, प्रमाण-पत्र, पुरस्कार, भोजन, अल्पाहारादि) शारीरिक (व्यवस्था, श्रमदान, स्वयं सेवक) सहयोग करेंगे उन्हें भी प्रमाण-पत्र, पुरस्कार (साहित्य) आदि दिया जायेगा। अधिक सहायता करने वालों का नामांकन प्रमाण-पत्र, निमंत्रण पत्रिकादि में किया जायेगा। यदि विद्यार्थी भी उपयुक्त सहायता करेंगे उन्हें भी प्रमाण पत्रादि दिया जायेगा।

18) कक्षा शिविरादि में जैन, जैनेत्तर, आबालवृद्ध-वनिता भाग ले सकते हैं।

19) ''सर्व जीव सुखाय सर्वजीव हितायं'', दृष्टिकोण को लेकर उदार, नम्र, सत्याग्राही, वैज्ञानिक प्रणाली से प्रत्येक कार्यक्रम होंगे। संकीर्णता, हठग्राहिता, धर्मान्धता, कषायावेश का बहिष्कार किया जायेगा।

20) कक्षा, शिविर सम्बन्धी समस्याओं का समाधान गुरुदेव के मार्गदर्शन से होगा।

21) गुरुदेव की आज्ञानुसार आवश्यकता होने पर कार्यक्रम में परिवर्तन भी किया जा सकता है।

परिच्छेद–1

इष्ट प्रार्थना

मंगलमय णमोकार मंत्र

णमो अरिहंताणम्,
णमो सिद्धाणम्,
णमो आइरियाणम्,
णमो उवज्झायाणम्,
णमो लोए सव्व साहूणम्।

अर्थ–णमो अरिहंताणम्– जिसने क्रोध–मान–माया–लोभ मोहादि चार घातिया रूप अंतरंग कर्म शत्रुओं को जीता है एवं अनंत-दर्शन, अनंत-ज्ञान,अनंत-सुख, अनंत वीर्यादि गुणों को प्राप्त किया है, अंतरंग–बहिरंग लक्ष्मी से युक्त हैं एवं सब जीवों के कल्याण के लिए निरपेक्ष भाव से आत्म कल्याण का उपदेश देते हैं, उनको अरिहंत कहते हैं। सम्पूर्ण विश्व में स्थित समस्त अरिहन्त परमेष्ठियों को मेरा नमस्कार हो। अरिहंत परमेष्ठी जीवन-मुक्त शरीरधारी परमात्मा होते हैं।

णमो सिद्धाणाम्- जीवन-मुक्त परमात्मा जब शेष संस्कारों से अथवा आठ कर्मों एवं शरीर से भी मुक्त होकर सिद्ध, बुद्ध, नित्य, निरंजन, निर्विकार स्वरूप को प्राप्त करते हैं तब उनको सिद्ध परमेष्ठी कहते हैं। वे सिद्ध परमेष्ठी एक ही समय में लोकाकाश के शिखर भाग में स्थित सिद्ध-शिला में जाकर विराजमान हो जाते है। संसार परिभ्रमण के कारणभूत समस्त संस्कार अर्थात् कर्मों को सम्पूर्ण रूप से नष्ट करने के कारण सिद्ध परमेष्ठी पुनः संसार में जन्म नहीं लेते हैं। वहाँ अनन्तकाल तक अनन्त सुख-शांति का अनुभव करते हुए विराजमान रहते हैं। इसी प्रकार के सम्पूर्ण सिद्धों को मेरा नमस्कार हो।

णमो आइरियाणम्– जो महामानव अंतरंग–बहिरंग परिग्रहों को त्याग करके दर्शनाचार, ज्ञानाचार, चारित्राचार, वीर्याचार और तपाचार का स्वयं आचरण करते हैं एवं आत्मसाधक-भव्य मुमुक्षु शिष्यों (अनुयायियों) से आचरण कराते हैं, उनकों आचार्य परमेष्ठी कहते हैं। इसी प्रकार के विश्व में स्थित सर्व आचार्य परमेष्ठियों को मेरा नमस्कार हो।

णमो उवज्झायाणाम्- जो रत्नत्रय से अलंकृत हैं, समस्त ज्ञान-विज्ञान में पारंगत हैं, आत्मज्ञान विशारद है, स्वमत-परमत के ज्ञाता हैं एवं स्वयं अध्ययन करते हैं तथा शिष्य वर्ग को अध्यापन कराते हैं, उन्हें उपाध्याय परमेष्ठी कहते हैं। अतः विश्व में स्थित सम्पूर्ण उपाध्याय परमेष्ठियों को मेरा नमस्कार हो।

णमो लोए सव्वसाहूणम्– जो बालकवत् यथाजात रूप को धारण करके सतत् आत्म साधन में रत रहते हैं और जो शत्रु-मित्र, सुख-दुःख, लाभ-अलाभ, निंदा- प्रशंसा, जन्म-मरण में समता भाव रखते है, उन्हें साधु परमेष्ठी कहते हैं। विश्व में स्थित सर्व साधु परमेष्ठियों को मेरा नमस्कार हो।

नमस्कार मंत्र महात्म्य–

एसो पंच णमोयारो सव्वपावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढ़मं होइ मंगलम्॥

अर्थ–यह पंच नमस्कार मंत्र सब पापों का नाश करने वाला है और सब मंगलों में पहला मंगल है।

विघ्नौघा प्रलयं यान्ति शाकिनीभूतपन्नगाः।
विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे॥

जिनेन्द्र, वीतराग, सर्वज्ञ भगवान के स्मरण-स्तवन मात्र से विघ्न, कष्ट, संकटों के समूह विनाश हो जाते हैं। शाकिनी, डाकिनी, भूत-प्रेत, व्यन्तर, सर्प, हिंसक पशु आदि दूर हो जाते हैं। विष निर्विष हो जाता है।

अतः सुख, शान्ति, अभ्युदय, मोक्षादि को चाहने वाले भव्य जीवों को णमोकार महामंत्र का स्मरण, मनन, ध्यान-चिन्तन, श्रद्धा, भक्ति, निष्ठा एवं शुद्ध भाव से सतत्, खाते, पीते, उठते, बैठते, चलते, फिरते सर्व कार्य के प्रारम्भ में करना चाहिये। जिस णमोकार मंत्र रूपी मूल्य से मोक्ष रूपी वैभव मिल सकता है, उससे सांसारिक वैभव मिले तो क्या बड़ी बात है। यह तो आनुषंगिक फल है। जैसे-कृषक को धान्य की खेती से धान्य के साथ आनुषंगिक फल स्वयं मिलता ही है।

मंगल दण्डक

चत्तारि मंगलम्, अरिहन्ता मंगलम्,
सिद्धा मंगलम्, साहू मंगलम्,
केवली पण्णत्तो धम्मो मंगलम्।

अर्थ– चत्तारि मंगलम्– विश्व (लोक) में चार प्रकार के मंगल होते हैं।
अरिहन्ता मंगलम्– विश्व में वीतराग, सर्वज्ञ, अरिहन्त भगवान् मंगलमय हैं।
सिद्धा मंगलम्– विश्व में नित्य, निरंजन, शुद्ध-बुद्ध भगवान् मंगलमय हैं।
साहू मंगलम्– विश्व में साधु महात्मा (आचार्य-उपाध्याय-साधु) मंगलमय हैं।
केवली पण्णत्तो धम्मो मंगलम्– वीतराग, सर्वज्ञ, केवली भगवान द्वारा प्रतिपादित अहिंसामय वीतराग विश्वधर्म मंगलमय हैं।

उत्तम दण्डक–

चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा,
सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा,
केवली पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा।

चत्तारि लोगुत्तमा–विश्व में चार उत्तम स्वरूप हैं।
अरिहंता लोगुत्तमा– विश्व में वीतराग, सर्वज्ञ अरिहंत भगवान् उत्तम स्वरूप हैं।
सिद्धालोगुत्तमा– विश्व में नित्य, निरंजन, शुद्ध-बुद्ध सिद्ध भगवान् उत्तम स्वरूप हैं।
साहू लोगुत्तमा– विश्व में साधु महात्मा (आचार्य-उपाध्याय-साधु) उत्तम स्वरूप हैं।
केवली पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा– वीतराग-सर्वज्ञ केवली भगवान् द्वारा प्रतिपादित अहिंसामय विश्वधर्म उत्तम स्वरूप हैं।

शरण दण्डक–

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरिहंते सरणं पव्वज्जामि,
सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि,
केवली पण्णत्तो धम्मो सरणं पवज्जामि।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-मैं लोक में स्थित चार मंगलमय, उत्तममय, शरणभूत चार की शरण में जाता हूँ।
अरिहंते सरणं पव्वज्जामि–मैं वीतराग, सर्वज्ञ अरहन्त भगवान् की शरण में

जाता हूँ, अर्थात् उनका आश्रय–अवलम्बन ग्रहण करता हूँ।
सिद्धे सरणं पव्वज्जामि– मैं सिद्ध शुद्ध-नित्य-निरंजन सिद्ध भगवान् की शरण में जाता हूँ।
साहू सरणं पव्वज्जामि- मैं साधु (आचार्य-उपाध्याय-साधु) परमेष्ठी की शरण में जाता हूँ।
केवली पण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि- मैं केवली भगवान् द्वारा प्रतिपादित अहिंसामय वीतराग धर्म की शरण में जाता हूँ।

भावार्थ– इस प्रकार इस मंत्र में किसी व्यक्ति विशेष को नमस्कार नहीं किया है, परन्तु विशेष आध्यात्मिक गुण सम्पन्न महामानवों को नमस्कार किया गया है। मनुष्य को महान् बनाने के लिये गुणपूजक बनना अनिवार्य है। मनुष्य गुणपूजक होने के कारण गुणीजनों का भी पूजक है। **'वंदे तद्गुण लब्धये'** अर्थात् उन आध्यात्मिक विभुतियों के आध्यात्मिक गुणों को प्राप्त करने के लिये मैं वंदना करता हूँ। जो गुणग्राही मनुष्य निरपेक्ष, निःस्वार्थ, सरल सहज भाव से महापुरुषों का गुणगान करता है अर्थात् उनको आदर्श मानकर चलता है, तब एक न एक दिन वह भी उसी प्रकार आदर्श बन जाता है। इस पवित्र उदात्त भावना से मन में एक आस्था, विश्वास-श्रद्धा उत्पन्न होती है, जिससे उसको प्रतिकूल परिस्थिति रूपी घने अन्धकार में भी आशारूपी ज्योति के दर्शन होते हैं।

जो मंगल स्वरूप है, वही उत्तम स्वरूप है, वही शरणभूत है। केवली द्वारा प्रतिपादित अहिंसामय धर्म मंगलमय है, उत्तम स्वरूप है एवं शरणभूत है। इसलिये मनुष्यों को मंगलमय, उत्तममय एवं स्वतन्त्र बनने के लिये उपरोक्त मंगलादियों का आश्रय लेना श्रेयस्कर है।

(परिच्छेद प्रथम) अभ्यास प्रश्न

1. णमोकार मंत्र का शुद्ध उच्चारण करो ?
2. णमोकार मंत्र का हिन्दी अर्थ बताओ ?
3. अरिहंत परमेष्ठी किसे कहते हैं ?
4. सिद्ध परमेष्ठी किसे कहते हैं ?
5. आचार्य परमेष्ठी किसे कहते हैं ?
6. उपाध्याय परमेष्ठी किसे कहते हैं ?

7. साधु परमेष्ठी किसे कहते हैं ?
8. नमस्कार मंत्र तथा महात्म्य श्लोक का शुद्ध उच्चारण करो ?
9. चत्तारि दण्डक का शुद्ध उच्चारण करो ?
10. चत्तारि दण्डक का हिन्दी अर्थ बताओ ?
11. णमोकार मंत्र में किसे नमस्कार किया गया है?
12. तीनों दण्डक में क्या समानता है?
13. नमस्कार क्यों किया जाता है?
14. णमोकार मंत्र कब-कब पढ़ना चाहिये ?
15. वर्तमान भारत में कौन-कौन से जीवन्त परमेष्ठी विद्यमान हैं ?
16. अभी आपके ग्राम (नगर) में कौन-कौन से जीवन्त परमेष्ठी हैं ?
17. सिद्ध परमेष्ठी से पहले अरिहन्त परमेष्ठी को नमस्कार क्यों किया गया हैं?
18. परमेष्ठी कितने प्रकार के होते हैं?

येषां न विद्या, न तपो न दानं,
ज्ञानं न शीलं, न गुणो न धर्मः।
ते मर्त्यलोके, भुवि भार भूताः।
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरंति ।।

जिसने विद्या अध्ययन नहीं किया, तप आचरण नहीं किया, दान नहीं किया, ज्ञान,शील, गुण और धर्म को प्राप्त नहीं किया, वह मनुष्य लोक में पृथ्वी के लिये भार स्वरूप होकर, मनुष्य रूप से पशु होकर विचरण करता है। अर्थात् उपरोक्त गुणों से रहित मनुष्य न स्वयं का उपकार करता है न पर का। इसलिए वह मनुष्य के आकार में पशु समान है

* * * * * *

यदि नो यजसे पादौ सर्वज्ञपरमेष्ठिनः।
अखिलं तर्हि वैदुष्यं मुधा ते शास्त्रकीर्तने ।।

यदि तुम सर्वज्ञ परमेश्वर के श्री चरणों की पूजा नहीं करते हों तो तुम्हारी सारी विद्वता किस काम की ?

परिच्छेद-2

पवित्र भावना

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः, संगतिः सर्वदार्यैः
सद्वृतानां गुणगणकथा, दोषवादे च मौनम्।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो, भावना चात्मतत्त्वे,
संपद्यतां मम भवभवे, यावदेतेऽपवर्गः।

अर्थ- हे दयामय भगवन्! जब तक मुझे मोक्ष की प्राप्ति न हो, तब तक मेरे जन्म-जन्मान्तर में ये निम्नलिखित भावनायें होती रहें-

१. सर्वज्ञ वीतराग भगवान् द्वारा प्रतिपादित सत् शास्त्रों के स्वाध्याय का अभ्यास बना रहे।
२. जिसने अन्तरंग शत्रु, इन्द्रियाँ एवं मन को जीत लिया है, उस जिनेन्द्र देव की स्तुति करता रहूँ।
३. मैं सदा सत् पुरुषों की संगति में रहूँ।
४. मैं श्रेष्ठ चारित्र एवं चारित्रवानों के गुणों की कथा में ही लीन रहूँ।
५. दूसरों के दोषकथन में सर्वथा और सर्वदा मौनव्रत धारण करूँ।
६. सभी के लिये प्रिय एवं हितकारी वचन बोलूँ।
७. सर्वदा मेरी भावना आत्मचिंतन-मनन एवं आत्मोन्नति में लगी रहे।

''असतो मा सद्गमय!
तमसोर्मा ज्योतिर्गमय!
मृत्योर्मा अमृतंगमय!''

हे ! करुणामय, पतित पावन, भगवान् मुझे असत् (मिथ्या) से सत् (सम्यक्) की ओर ले चलो। अज्ञान रूपी मोहांधकार से ज्ञान रूपी ज्योति की ओर ले चलो। संसार रूपी मृत्युलोक से मोक्षरूपी अमृत लोक की ओर ले चलो।

विश्व शांति भावना-

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे संतु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिदुःखमाप्नुयात् ।।

(यशस्तिलक चम्पू)

हे करुणामय भगवान् ! विश्व के सर्व जीव सुखी रहें, निरोगी रहें, जीव

सच्चरित्रमय, सज्जनमय दृष्टिगोचार होवें, कोई भी दुःख को प्राप्त न होवें।

शिव मस्तु सर्व जगतः, परहित निरता भवन्तुभूतगणाः।
दोषाः प्रयान्तु नाशं, सर्वत्र सुखी भवतु लोकः ॥

सम्पूर्ण विश्व मंगलमय हो, सम्पूर्ण जीव-जगत् परहित में रत रहे, सम्पूर्ण दोषों का नाश हो, सदा सर्वदा सब जीव-जगत सुखी रहें।

संपूजकानां प्रतिपालकानां।
यतीन्द्र सामान्यतपोधनानाम् ॥
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः।
करोतु शांतिं भगवानजिनेन्द्रः ॥

हे! जितारि जितेन्द्रिय भगवान् पूजा करने वालों (धर्म उपासकों) के लिये, धर्म-धर्मायतन एवं धर्मात्माओं की रक्षा करने वालों के लिए, सामान्य एवं विशेष साधु-संत, सज्जन एवं तपस्वियों के लिये, देश, राष्ट्र, नगर, राजा के लिये शान्ति प्रदान करें।

क्षेमं सर्व प्रजानां, प्रभवतु बलवान् धार्मिको भूमिपालः।
काले काले च सम्यग्वितरतु मघवा, व्याधयो यांतु नाशम् ॥
दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां, मास्म भूज्जीव लोके।
जैनेन्द्रं धर्म चक्रं, प्रभवतु सततं, सर्व सौख्य प्रदायि ॥

इस विश्व में समस्त प्रजा (प्राणी-जगत्) का कल्याण हो, धार्मिक राजा सर्व शक्ति सम्पन्न हो, समय-समय पर बादल (इन्द्र) उत्तम वर्षा करें, सर्व रोग नष्ट हो जावें, दुर्भिक्ष, महामारी, रोग, चोरी आदि दुर्घटना एक क्षण के लिये भी इस जीव लोक में नहीं रहें। सर्व सुख को देने वाले जिनेन्द्र भगवान् द्वारा प्रतिपादित, अहिंसा, उत्तमक्षमादि धर्म समूह बिना प्रतिबन्ध से सम्पूर्ण जगत् में प्रचार-प्रसार को प्राप्त होवे।

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञान भास्कराः।
कुर्वतु जगतां शान्तिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥

जो आत्मघात रूप चार घाति कर्मों को नष्ट करके केवलज्ञान रूपी सूर्य-से प्रकाशमान हैं, इसी प्रकार के आदिनाथ भगवान् से लेकर महावीर भगवान् पर्यन्त सभी भगवान् जगत को शांति प्रदान करें।

ॐ शांति ! शांति !! शांति !!!

(परिच्छेद 2) अभ्यास प्रश्न

1. जब तक मोक्ष की प्राप्ति न हो तब तक कौन-कौन सी भावना भानी चाहिए?
2. हमारा लक्ष्य क्या-क्या होना चाहिये ?
3. कौन-कौन सी भावना से विश्व में शान्ति की स्थापना हो सकती है ?
4. पवित्र भावना के कुछ श्लोक का शुद्ध उच्चारण करो ?
5. पवित्र भावना के कुछ श्लोक के अर्थ बताओ ?
6. इस पवित्र भावना परिच्छेद से क्या क्या शिक्षायें मिलती हैं ?
7. पवित्र भावनायें क्यों भानी चाहिए ?

विद्या प्राप्ति मंत्र-

ॐ ह्रीं एं ह्रीं ॐ सरस्वतयै नमः ।

विधि- यह विद्या प्राप्ति का सिद्ध मंत्र है। इस मन्त्र का शुभ मुहूर्त में पूर्व की ओर मुँह करके जाप शुरु करें। सफेद वस्त्र, सफेद आसन तथा सफेद माला का प्रयोग करें। 11,000 जाप करने से मंत्र सिद्ध हो जाता है। इस मंत्र से ब्राह्मी घृत अभिमंत्रित कर खायें तो वाणी में सरस्वती विराजमान होगी।

(मंत्र विज्ञान– लेखक **आचार्य श्री कनकनन्दी**)

परिच्छेद-3

देवदर्शन विधि

पूजक को प्रातः ब्रह्ममुहूर्त में निद्रा त्यागकर शौचादि से निवृत्त होकर शुद्ध छने जल से शारीरिक शुद्धि करके शुद्ध वस्त्र परिधान (पहनना) करना चाहिये। स्वगृह से स्व-शक्त्यादि के अनुसार शुद्ध प्रासुक जल, चन्दन, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य, दीप, धूप, फलादि यथायोग्य अष्ट द्रव्य लेकर जीवों की रक्षा करते हुए ईर्यापथ शुद्धि से पूज्य पुरुष के गुणकीर्तिन, प्रार्थना, स्तुति, वन्दना आदि करते हुए मन्दिर की ओर जाना चाहिए। मन्दिर के द्वार में प्रवेश करते हुए ॐ जय! जय! जय! निः सहि! निःसहि! नमोस्तु! नमोस्तु! भावपूर्वक बोलना चाहिये। पूजक जब पहले पूजा के लिए घर त्याग किया था तब उस समय द्रव्य रूप से एवं भाव रूप से सांसारिक समस्त आरम्भ, परिग्रह आदि का त्याग करके मन्दिर की ओर प्रयाण करता है। मन्दिर के द्वार पर प्रवेश करते हुये उपरोक्त जय एवं निःसहि शब्द मन्दिर में पूजन अर्चन करने वाले मनुष्य एवं देवों को रास्ता देने की सूचना के साथ-साथ पूजक के गुण स्मरण सहित अपने अन्तरंग में स्थित भाव-परिग्रह स्वरूप क्रोध-मान-माया-लोभ को स्वयं की आत्मा से दूर होने के लिए सूचना देता है अर्थात् हटाता है। मन्दिर के द्वार के एक पार्श्व (भाग) में प्रासुक जल से हाथ पैर एवं मुख की शुद्धि करके मन्दिर में प्रवेश करना चाहिये क्योंकि रास्ते में गमन करते समय अशुद्ध-मिट्टी, कीचड़, आदि के साथ-साथ सूक्ष्म रोगाणु, कीटाणु हाथ-पैर में लग जाते हैं। बिना हाथ-पैर धोये मन्दिर में प्रवेश करने से मन्दिर का वातावरण दूषित हो जाता है। पूजक को चाहिये कि शरीर-शुद्धि, भाव-शुद्धि एवं वातावरण शुद्धि के लिये मुख में इलायची, लोंग, पान, तम्बाकू आदि वस्तुओं का प्रयोग न करें। मन्दिर जाने के समय तथा पूजन, वन्दना, स्तुति, नमस्कार के समय चर्म-निर्मित एवं ऊन से निर्मित कोई भी वस्तु का प्रयोग नहीं करना चाहिये। इसी प्रकार प्राणी के अवयव स्वरूप,रक्त, माँस, हड्डी आदि से निर्मित लिपिस्टिक, क्रीम, पाउडर, नेलपॉलिस आदि सौन्दर्य-प्रसाधन सामग्री का प्रयोग मन्दिर जाते समय कदापि नहीं करना चाहिये तथा चर्बी से निर्मित साबुन से स्नान करके भी मन्दिर नहीं जाना चाहिए क्योंकि प्रथमतः उपरोक्त चीजों की उत्पत्ति हिंसात्मक साधनों एवं प्रक्रिया से होती है एवं प्रत्येक समय में उपरोक्त चीजों में तज्जातीय

अचाक्षुष सूक्ष्म जीवों की उत्पत्ति निरन्तर होती रहती है। इसी प्रकार सम्पूर्ण चर्मज, रोमजों में जीवों की उत्पत्ति होती रहती है। वस्तुतः उन चीजों का त्याग आजीवन करना ही श्रेयस्कर है। उपरोक्त चीजों के व्यवहार से हिंसा के साथ-साथ शारीरिक शुद्धि, मानसिक शुद्धि एवं वातावरण की शुद्धि भी नहीं रहती है। मन्दिर में आते समय चप्पल, जूते आदि का भी प्रयोग नहीं करना चाहिये, क्योंकि नंगे पैर आने से पूज्य के प्रति विनय प्रकट होता है, उसके साथ-साथ पृथ्वी के साथ पैर के स्पर्श एवं घर्षण से भौतिक एवं भावात्मक विद्युत् का परिचालन पृथ्वी के साथ होता है, जिससे स्वास्थ्य लाभ भी होता है।

मन्दिर में प्रवेश के बाद ईर्यापथ-शुद्धि, दर्शन-पाठ, णमोकार मंत्र एवं चत्तारि दण्डक आदि का स्मरण करते हुये मन्दिर की तीन प्रदक्षिणा करें। तीन प्रदक्षिणा करते हुए। (1) जन्म, जरा, मृत्यु (2) शारीरिक-मानसिक-आध्यात्मिक रोग (3) द्रव्य कर्म, भाव कर्म, नोकर्म विनाशार्थ एवं 4) सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यग्चारित्र की प्राप्ति के अर्थ बायें से दायें की तरफ तीन प्रदक्षिणा लगायें। प्रदक्षिणा के अनंतर भगवान् के सम्मुख एक पार्श्व भाग में कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े होकर ईर्यापथ-शुद्धि के लिये णमोकार मन्त्र का नव बार स्मरण करें। उसके अनन्तर गवासन में बैठकर तीन बार पंचांग नमस्कार करें। गवासन का यह अर्थ है कि जिस प्रकार गाय पाँच अंगों का स्पर्श करके बैठती है, उसी प्रकार बैठकर मन-वचन-काय से नमस्कार करें। भावपूर्वक गवासन में बैठकर नमस्कार करने से मानसिक तनाव आदि दूर होते हैं, विनय गुण प्रकट होता है, पूज्य के प्रति आदर एवं समर्पण भाव प्रकट होता है, ज्ञान में वृद्धि होती है। दर्शन के उपरान्त पूर्वाचार्यों के द्वारा प्रणीत अभिषेक-पूजा विधिपूर्वक करें। अनन्तर प्रासुक शुद्ध वस्त्र से भगवान् को ठीक से पोंछकर सिंहासन में विराजमान करें। आगमानुकूल प्रासुक आसन में पूर्व या उत्तर दिक् की ओर मुख करके बैठकर पूजन करें।

देवदर्शन तथा पूजा का फल

भक्त जब भगवान् के पास जाता है तब वह भगवान् के स्वरूप रूपी दर्पण से अपने स्वरूप का दर्शन करता है। जब वह द्रव्य दृष्टि से स्वयं को एवं भगवान् को देखता है तब दोनों में कोई अन्तर दृष्टिगोचर नहीं होता है क्योंकि पूज्य भी जीव द्रव्य है तथा पूजक भी जीव द्रव्य है। गुण-दृष्टि से भी कोई विशेष अन्तर परिलक्षित नहीं होता है किन्तु जब पर्याय-दृष्टि से अवलोकन

करता है तब दोनों में महान् अन्तर परिलक्षित होता है क्योंकि भगवान् पर्याय दृष्टि से अनन्त ज्ञान, दर्शन, सुख वीर्य के अक्षय भण्डार हैं एवं पूजक स्वयं अनन्त अज्ञान, दुःखादि को भोगने वाला है।

अंग्रेजी में एक नीति वाक्य है-

There is no difference between God and us.
But there is so difference between god and us.

अर्थात् द्रव्य दृष्टि से भगवान् और हमारे में कोई अन्तर नहीं है किन्तु अवस्था दृष्टि (पर्याय दृष्टि) से भगवान् और हमारे में महान् अन्तर है। भक्त भगवान् के पास एक अलौकिक उपादेय प्रशस्त स्वार्थ को लेकर जाता है। उसका स्वार्थ यह है कि मेरा स्वरूप भगवत् स्वरूप होते हुये भी मैं अभी दीन-हीन-भिखारी के समान हूँ। मैं भगवान् के पास से उनसे वही शिक्षा प्राप्त करूँ जिस मार्ग पर चलते हुये भगवान् ने इस परमोत्कृष्ट नित्यानन्द अवस्था को प्राप्त किया है। इसलिये भक्त की आद्यन्त भावना एवं परिणति निम्न प्रकार की होती है-

'दासोऽहं' रटता प्रभो ! आया जब तुम पास।
'द' दर्शत हट गयो, सोऽहं रहो प्रकाश॥
सोऽहं सोऽहं ध्यावतो रह न सको सकार।
दीप 'अहं' मय हो गयो अविनाशी अविकार॥

जब भक्त भगवान् के पास आता है तब वह स्वयं को दास (पूजक) एवं भगवान् को प्रभु (पूज्य) मानता है। जब भगवान् का दर्शन करके भगवान् का स्वरूप एवं स्वयं के स्वरूप का तुलनात्मक विश्लेषण करता है तब वह पूज्य के गुणों का अनुकरण करके आध्यात्मिक साधना करता है तो उस साधना के फलस्वरूप निर्विकल्प अवस्था को प्राप्त करता है तब सोऽहं रूप विकल्प भी विलय हो जाता है, तब अहं रूप अविनाशी, अविकार स्वरूप को प्राप्त कर लेता है। यह ही पूजा का परमोत्कृष्ट फल है। आचार्य प्रवर उमास्वामी ने कहा है-**'वन्दे तद्गुण लब्धये'** अर्थात् मैं वीतराग, सर्वज्ञ, हितोपदेशी भगवान् के गुणों की प्राप्ति के लिये वन्दना करता हूँ।

पूजा, वन्दना, अर्चना, विनय, समर्पित भाव में ऐसी एक शक्ति है जिसे पूजक के मन में पूज्य के गुण संचार करते रहते हैं तथा धीरे-धीरे पूजक भी पूज्य बन जाता है।

जिनार्चना से बहुआयामी (प्रकार) लाभ होता है। इसे महान् आत्मा के प्रति विनय भाव प्रकट होता है। मानसिक शान्ति मिलती है जिससे मानसिक तनाव दूर होने के कारण शारीरिक एवं मानसिक आरोग्य प्राप्त होता है। पूज्य पुरुष के प्रति प्रशस्त राग होने के कारण पाप कर्म के संवर के साथ-साथ असंख्यात गुणी कर्म निर्जरा एवं सातिशय पुण्य का बन्ध होता है। जिससे अभ्युदय के साथ-साथ मोक्ष सुख की उपलब्धि होती है। पूज्य पुरुष का नामोच्चारण, गुणगान, नामस्मरण स्वयं मंगल स्वरूप है।

दर्शन स्तोत्र

दर्शनं देव देवेस्य, दर्शनं पाप नाशनम्।
दर्शनं स्वर्गसोपनम्, दर्शनं मोक्ष साधनम्॥ (1)

देवाधिदेव अरिहन्त भगवान् का दर्शन पापों का नाशक है, स्वर्ग की सीढ़ी है और अधिक क्या ? दर्शन मोक्ष का भी साधन है।

दर्शनेन जिनेन्द्राणां, साधूनां वन्दनेन च।
न चिरं तिष्ठते पापं, छिद्रहस्ते यथोदकम्॥ (2)

जिस प्रकार छिद्र सहित हाथों में जल बहुत समय नहीं टिकता है उसी प्रकार जिनेन्द्र देव के दर्शन और साधुओं की वन्दना करने से पाप लम्बे समय तक नहीं ठहरते हैं।

वीतराग मुखं दृष्ट्वा, पद्मरागसमप्रभ्।
जन्मजन्मकृतं पापं, दर्शनेन विनश्यति॥ (3)

पद्मरागमणि की प्रभा के समान वीतराग भगवान् को देखकर जन्म-जन्म में किये गये पाप, दर्शन करने से नाश को प्राप्त हो जाते हैं।

दर्शनं जिनसूर्यस्य, संसारध्वान्तनाशनम्।
बोधनं चित्तपद्मस्य, समस्तार्थ प्रकाशनम्॥ (4)

जिनेन्द्र रूपी सूर्य का दर्शन समस्त पाप को नाश करने वाला और मनरूपी कमल को विकसित करने वाला समस्त पदार्थों का प्रकाशक है।

दर्शनं जिन चन्द्रस्य, सद्धर्मामृतवर्षणम्।
जन्मदाह विनाशाय, वर्धनं सुख वारिधे॥ (5)

जिनेन्द्र रूपी चन्द्रमा का दर्शन जन्म रूपी दाह का नाश करने के लिये सुख रूपी समुद्र की वृद्धि करने के लिये सद्धर्मरूपी अमृत की वर्षा करता है।

जीवादितत्वं प्रतिपादकाय, सम्यक्त्वमुख्याष्टगुणार्णवाय।
प्रशान्तरूपाय दिगम्बराय, देवाधि देवाय नमो जिनाय॥ (6)

जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष रूपी सात तत्वों का स्वरूप बताने वाले, सम्यक्त्व आदि आठ गुणों के समुद्र, प्रशान्त रूप, दिगम्बर अरहंत जिनेन्द्र के लिये नमस्कार।

चिदानन्दैकरूपाय, जिनाय परमात्मने।
परमात्मप्रकाशाय, नित्यं सिद्धात्मने नमः॥ (7)

हे भगवान्! आप आनन्द स्वरूप हो, कर्मो को जीतने वाले हो, उत्कृष्ट आत्मा हो, परम तत्व आत्मा के प्रकाशक हो आपको सर्वदा (सदा) नमस्कार हो।

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम।
तस्मात्कारुण्यभावेन, रक्ष-रक्ष जिनेश्वरः॥ (8)

संसार में आपके सिवाय, अन्य कोई शरण नहीं हैं, आप ही मेरे शरण हैं। इसलिये हे जिनदेव ! दया करके मेरी रक्षा करो, रक्षा करो!

न हि त्राता न हि त्राता नहि त्राता जगत्त्रये।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति॥ (9)

तीन लोक में वीतराग अरहन्त भगवान् के सिवाय अन्य कोई जीवों का रक्षक न भूतकाल में हुआ और न भविष्य में होगा।

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्ति दिने दिने।
सदामेऽस्तु सदा मेऽस्तुसदामेऽसतु भवे-भवे॥ (10)

हे प्रभो ! प्रतिदिन और भव-भव में भी मुझ में जिन भक्ति सदा हो, मुझ में जिन भक्ति सदा हो, मुझ में जिन भक्ति सदा हो।

जिनधर्मविनिर्मुक्तो मा भवेच्चक्रवर्त्यपि।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि, जिनधर्मानुवासितः॥ (11)

जिनधर्म से रहित चक्रवर्ती पद भी मुझे प्राप्त नहीं हो, चाहे दुःखी, दरिद्री भी होना पड़े, पर जिनधर्म सहित मेरा जीवन हो।

जन्म जन्मकृतं पापं, जन्म-कोटि समार्जितम्।
जन्ममृत्युजरारोगं, हन्यते जिन-दर्शनात्॥ (12)

अरहन्त भगवान् के दर्शन से जन्म-जन्मान्तर के उपार्जित करोड़ों पाप एवं जन्म, मरण, बुढ़ापा और रोग नष्ट हो जाता है।

अद्यभवत्सफलता नयनद्वयस्य,
देवः त्वदीय चरणाम्बुज-वीक्षणेन।

अद्य त्रिलोकतिलक! प्रतिभासिते मे,
संसार-वारिधिरयं चुलकः प्रमाणम्॥

हे जिनदेव! आपके चरण कमल को देखने से आज मेरे दोनों नेत्र सफल हो गये हैं। हे तीन लोक के चूड़ामणि! मुझे आज यह संसार बहुत थोड़ा प्रतीत होता है।

(परिच्छेद 3) अभ्यास प्रश्न

1. देवदर्शन विधि का वर्णन करो ?
2. देवदर्शन के लिए किन-किन शुद्धियों की आवश्यकता है ?
3. ब्रह्म मुहूर्त में क्यों उठना चाहिये ?
4. हिंसात्मक प्रसाधन सामग्रियों का प्रयोग क्यों नहीं करना चाहिए ?
5. नंगे पैर मंदिर क्यों जाना चाहिए ?
6. तीन प्रदक्षिणायें क्यों देनी चाहिए ?
7. मंदिर में प्रवेश करते समय पैर क्यों धोना चाहिए ?
8. जूठे मुख मंदिर में प्रवेश क्यों नहीं करना चाहिए ?
9. निःसहिः क्यों बोलना चाहिए और किन-किन स्थानों पर बोलना चाहिए ?
10. घण्टा क्यों बजाना चाहिए ?
11. देवदर्शन तथा पूजा अष्ट द्रव्य से क्यों करना चाहिए ?
12. किस दिशा की ओर मुख करके देवदर्शन करना चाहिये ?
13. देवदर्शन तथा पूजा से क्या-क्या लाभ है ?
14. जीव तथा जिनेन्द्र में क्या समानता एवं असमानता है?
15. दर्शन स्तोत्र या उसके कुछ श्लोक शुद्ध बोलो !
16. दर्शन स्तोत्र में जिनेन्द्र की तुलना किन-किन के साथ की गई है ?
17. दर्शन स्तोत्र में क्या कामना की गई है ?
18. मंदिर से निकलते समय क्या बोलना चाहिए और क्यों बोलना चाहिए ?

परिच्छेद-4

धर्म प्रवर्त्तक (तीर्थंकर)

जिसके द्वारा भव्य जीव संसार से तिरते हैं वह तीर्थ है। कुछ भव्य श्रुत अथवा आवलम्बनभूत गणधरों के द्वारा संसार से तिरते हैं अतः श्रुत और गणधरों को भी तीर्थ कहते हैं। इन दोनों तीर्थ को जो करते हैं,वे तीर्थंकर हैं। तीर्थ शब्द से रत्नत्रय रूप मार्ग को कहा जाता है। उसके करने से तीर्थंकर होते हैं। वे जन्मतः मति, श्रुत और अवधिज्ञान तथा दीक्षा के पश्चात् मनः पर्ययज्ञान के धारी होते हैं। स्वर्ग से गर्भ में आने पर जन्माभिषेक और तपकल्याणादि 5 कल्याण में चारों प्रकार के देव उनकी पूजा करते हैं। उनको मोक्ष की प्राप्ति नियम से होता है फिर भी वे अपने बल और वीर्य को न छिपाकर तप के अनुष्ठान में उद्यत रहते हैं।

तीर्थंकर बनने के 16 कारण

दर्शनविशुद्धि, विनयसम्पन्नता, शील और व्रतों का अतिचार रहित पालन करना, ज्ञान में सतत् उपयोग, सतत् संवेग, शक्ति के अनुसार त्याग, शक्ति के अनुसार तप, साधु समाधि, वैय्यावृत्य करना, अरहंत, आचार्य, बहुश्रुत और प्रवचन भक्ति, आवश्यक क्रियाओं का न छोड़ना, मोक्ष मार्ग की प्रभावना, प्रवचन और वात्सल्य ये तीर्थंकर बनने के कारण हैं।

1. **दर्शन विशुद्धि**- जिन भगवान् अरहन्त परमेष्ठी द्वारा कहे हुए निर्ग्रन्थ स्वरूप मोक्ष मार्ग पर रुचि रखना दर्शन विशुद्धि है। इसके 8 अंग हैं-1. निःशंकित, 2. निःकांक्षित, 3. निर्विचिकित्सा, 4. अमूढदृष्टिता, 5. उपवृहण, 6. स्थितिकरण, 7. वात्सल्य, 8. प्रभावना।
2. **विनय सम्पन्नता**– सम्यग्ज्ञानादि मोक्षमार्ग और उनके साधन गुरु आदि के प्रति अपने योग्य आचरण द्वारा आदर-सत्कार करना विनय है और इससे युक्त होना विनय सम्पन्नता हैं
3. **शील और व्रतों का अतिचार रहित पालन करना**– अहिंसादिक व्रत हैं और इनके पालन करने के लिए क्रोधादिक का त्याग करना शील है। इन दोनों के पालन करने में निर्दोष प्रवृत्ति रखना शीलव्रत अनतिचार है।
4. **ज्ञान में सतत् उपयोग**– जीवादि पदार्थ रूप स्वतत्व विषयक सम्यग्ज्ञान में निरन्तर लगे रहना अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग है।
5. **सतत् संवेग**– संसार के दुःखों से निरन्तर डरते रहना संवेग है।
6. **शक्ति के अनुसार त्याग**- त्याग दान है। वह चार प्रकार का है-आहार दान, अभय दान, औषध दान और ज्ञान दान। उसे शक्ति के अनुसार विधिपूर्वक देना यथाशक्ति त्याग है।

7. **शक्ति के अनुसार तप**- शक्ति को न छिपाकर मोक्ष मार्ग के अनुकूल शरीर को क्लेश देना यथाशक्ति तप है।
8. **साधु समाधि**- जैसे भण्डार में आग लग जाने पर भण्डार बहुत उपकारी होने से आग को शान्त किया जाता है इसी प्रकार अनेक प्रकार के व्रत और शीलों से समृद्ध मुनि के तप करते हुए किसी कारण से विघ्न के उत्पन्न होने पर उसका संधारण करना-शान्त करना साधु समाधि है।
9. **वैयावृत्य करना**- गुणी पुरुष के दुःख आ पड़ने पर निर्दोष विधि से उसका दुःख दूर करना वैयावृत्य है।
10. **अरिहंत भक्ति**- अरिहन्त भगवान् में भावों की विशुद्धि के साथ अनुराग, श्रद्धा, प्रेम, विश्वास, समर्पण भाव रखना अरिहंत भक्ति है।
11. **आचार्य भक्ति**- धर्माचार्य के प्रति अनुराग की भावना रखना आचार्य भक्ति है।
12. **बहुश्रुत भक्ति**- जो ज्ञान, विज्ञान के धनी हैं ऐसे निर्ग्रन्थ तपोधन उपाध्याय के प्रति भावों की विशुद्धि के साथ अनुराग रखना बहुश्रुत भक्ति है।
13. **प्रवचन भक्ति**- सर्वज्ञ, वीतराग, हितोपदेशी भगवान् के प्रकृष्ट वचनों के प्रति भावों की विशुद्धि के साथ अनुराग रखना प्रवचन भक्ति है।
14. **आवश्यक क्रियाओं को न छोड़ना**- इन आवश्यक क्रियाओं का यथा समय करना आवश्यक परिहाणि है।
15. **मोक्ष मार्ग की प्रभावना**- ज्ञान, तप, दान और जिन पूजा इनके द्वारा धर्म का प्रकाश करना मार्ग प्रभावना है।
16. **प्रवचनवात्सल्य**- जैसे गाय बछड़े पर स्नेह रखती है उसी प्रकार साधर्मियों पर स्नेह रखना प्रवचन वात्सल्यत्व है। ये सब सोलह कारण हैं।

यदि अलग-अलग इनका भले प्रकार चिन्तन किया जाता है तो भी ये तीर्थंकर नामकर्म के आस्रव के कारण होते हैं और समुदाय रूप से सबका भले प्रकार चिन्तन किया जाता है तो भी वे तीर्थंकर नामकर्म के आस्रव के कारण हैं।

मंगलमय पंचकल्याणक

ऊपर वर्णित महती 16 भावनाओं से जो महापुरुष भावित होते हैं वे आगे जाकर उन भावनाओं के फलस्वरूप तीनों लोक के उपकारी धर्मतीर्थ के प्रवर्तक 5 कल्याणक से मंडित तीर्थंकर होते हैं।

1. गर्भ कल्याणक (स्वर्गावतरण),2. जन्म कल्याणक, 3. दीक्षा कल्याणक (परिनिष्क्रमण), 4. केवल ज्ञान कल्याणक (बोधि लाभ), 5. मोक्ष

कल्याणक।

1. गर्भ कल्याणक- तीर्थंकर का माता के गर्भ में अवतरित होने को गर्भ कल्याणक कहते हैं। गर्भ में आने के छः महीने पहले से ही रत्नों की वर्षा होने लगती है। यह वर्षा जब तक तीर्थंकर गर्भ में रहते हैं तब तक होती है अर्थात् 15 महीने तक होती है। जब तीर्थंकर गर्भ में आते हैं तो माता को 16 स्वप्न दिखते हैं।

2. जन्म कल्याणक- तीर्थंकर का माता के गर्भ से निष्क्रमण (जन्म) होने को जन्म कल्याणक कहते हैं। तीर्थंकर जन्मतः 10 अतिशय से सहित होते हैं। यथा-

1. स्वेद रहितता (खेद रहितता), 2. निर्मल शरीरता, 3. दूध के समान धवल रुधिर, 4. वज्रवृषभनाराच संहनन, 5. समचतुरस्र संस्थान (शरीर), 6. अनुपम रूप, 7. नृप चम्पक की उत्तम गन्ध के समान गन्ध का धारण करना, 8. 1008 (एक हजार आठ) उत्तम लक्षणों को धारण करना, 9. अनन्तबल-वीर्य, 10. हित-मित एवं मधुर भाषण ये स्वाभाविक अतिशय के 10 भेद हैं। ये 10 भेद रूप अतिशय तीर्थंकरों के जन्म ग्रहण से ही उत्पन्न हो जाते हैं।

अतिशय रूप सुगन्ध तन, नाहिं पसेव निहार।
प्रियहित वचन अतुल्य बल, रुधिर श्वेत आकार॥
लक्षण सहस्र रू आठ तन, समचतुष्क संठान।
वज्रवृषभनाराच युत, ये जनमत दस जान॥

(अ) जन्माभिषेक- बाल तीर्थंकर को इन्द्र-इन्द्राणी देवों के साथ सुमेरू पर्वत पर ले जाकर 1008 कलशों से अभिषेक करते हैं। इसे जन्माभिषेक कहते हैं।

(आ) तीर्थंकर का लाञ्छन-अभिषेक के पश्चात् भगवान् के दाहिने अँगूठे में जो विशिष्ट चिन्ह रहता है, पहिचान के लिये उसको लाञ्छन-चिह्न के रूप से इन्द्र घोषणा करता है। जैसे-आदिनाथ (ऋषभदेव) के दाहिने अँगूठे में ऋषभ (बैल) का चिह्न था। इसलिये आदिनाथ भगवान् का लाञ्छन वृषभ हैं। तीर्थंकर भगवान् जब तक केवल ज्ञान प्राप्त नहीं करते हैं तब तक आहार करते हैं परन्तु निहार (मल-मूत्र) नहीं करते।

3. तपकल्याणक- तीर्थंकर भगवान् जब संसार, शरीर, भोगों से विरक्त होते हैं तब लौकान्तिक देव आकर उस वैराग्य की अनुमोदना करते हैं। स्वर्ग से देवगण एक दिव्य पालकी को लाते हैं। उसमें तीर्थंकर बैठकर दीक्षा स्थान को प्रयाण (गमन) करते हैं। उस स्थान में दीक्षा के लिये पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुख करके बैठकर 'नमः सिद्धेभ्यः' बोलकर पंचमुष्ठि केशलोंचन करते हैं

फिर सम्पूर्ण अंतरंग-बहिरंग परिग्रह त्याग करके निर्ग्रन्थ दिगम्बर दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं।

4. केवल ज्ञान कल्याणक (केवल बोधि लाभ)- कठोर आत्म साधना से जब आत्म-शुद्धि की वृद्धि होते-होते निर्मल धूम्र रहित प्रखर अग्नि के समान शुक्ल ध्यान अंतरंग में प्रज्जवलित हो उठता है तब आत्म-विशुद्धि के आध्यात्मिक सोपान स्वरूप क्षपक श्रेणी में आरोहण करते-करते जब अन्तरंग-मल स्वरूप ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय एवं अन्तराय कर्मों को भस्म कर डालते हैं तब आत्म विशुद्धि एवं उत्तम गुण स्वरूप अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त सुख एवं अनन्त वीर्य को प्राप्त करके पूर्ण तीर्थंकर अवस्था को प्राप्त कर लेते हैं। इस अवस्था को जैनागम में तेरहवाँ गुणस्थान, संयोग केवली, जीवन मुक्त परमात्मा, अर्हत् आदि नाम से अभिहित किया गया है। बौद्ध धर्म में इस अवस्था को बोधिसत्व, बुद्धत्व, अर्हत् तीर्थंकर आदि कहते हैं। हिन्दु धर्म में जीवन-मुक्त परमात्मा, सशरीर परमात्मा आदि नाम से पुकारते हैं।

केवल ज्ञान के अतिशय- 1. अपने आप तीर्थंकर के पुण्य से चारों दिशाओं में एक सौ योजन तक सुभिक्षता, 2. आकाश गमन, 3.हिंसा का अभाव, 4. भोजन का अभाव, 5. उपसर्ग का अभाव,6. सब की ओर मुख करके स्थित होना, 7. छाया रहितता (परछाई नहीं पड़ना) 8. निर्निमेष दृष्टि, 9. विद्याओं की ईशता, 10., सजीव होते हुए भी नख और रोमों का समान होना, 11. अठारह महाभाषा, सात सौ क्षुद्रभाषा तथा और भी जो संज्ञी जीवों की समस्त अनक्षरात्मक भाषायें हैं उनमें तालु, दाँत, ओष्ठ और कण्ठ के व्यापार से रहित होकर एक ही समय भव्यजनों को दिव्य उपदेश देना। भगवान् जिनेन्द्र की स्वभावतः अस्खलित और अनुपम दिव्य-ध्वनि तीनों संध्याकालों में नव मुहूर्त्त तक निकलती है। वह दिव्य-ध्वनि भव्य जीवों को छह द्रव्य, नौ पदार्थ, पाँच अस्तिकाय और सात तत्त्वों का नाना प्रकार के हेतुओं द्वारा निरूपण करती है। इस प्रकार घातिया कर्मों के क्षय से उत्पन्न हुए ये महान् आश्चर्यजनक ग्यारह अतिशय तीर्थंकर को केवल ज्ञान के उत्पन्न होने पर प्रकट होते हैं।

योजन शत इक में सुभिख, गगन-गमन मुख चार।
नहिं अदया उपसर्ग नहीं, नाहीं कवलाहार॥
सब विद्या ईश्वरपनो, नाहिं बढ़े नख-केश।
अनिमिष दृग छाया सहित दश केवल के वेष॥

अठारह दोष रहित तीर्थंकर - समन्तभद्र आचार्य श्री ने सच्चे देव का लक्षण बताते हुए दोष रहितता को निम्न प्रकार बताया है-

क्षुत्पिपासाजरातङ्क-जन्मान्तक-भय-स्मयाः।
न रागद्वेषमोहाश्च, यस्याप्तः सः प्रकीर्त्यते ॥6॥

1. भूख, 2.प्यास, 3. बुढ़ापा, 4.रोग, 5. जन्म, 6. मरण, 7. भय, 8. गर्व, 9. राग, 10. द्वेष, 11. मोह, 12. आश्चर्य, 13. अरति, 14. खेद, 15. शोक, 16. निद्रा, 17. चिंता, 18. स्वेद, जो इन 18दोषों से रहित होते हैं उसे आप्त (धर्मोपदेशक तीर्थंकर) कहते हैं-

जन्म जरा तिरखा क्षुधा, विस्मय आरत खेद।
रोग शोक मद मोह भय, निद्रा चिन्ता स्वेद॥
राग द्वेष अरू मरण युत ये अष्टादश दोष।
नाहिं होते अरिहन्त के सो छवि लायक मोष॥

'अष्टमहाप्रातिहार्य'

अष्टमहाप्रातिहार्य निम्नोक्त प्रकार के हैं-

1. सिंहासन, 2. पुष्पवृष्टि, 3. अशोक वृक्ष, 4. छत्र त्रय, 5. 64चमर, 6. देव दुन्दुभि, 7. भामण्डल, 8. सम्पूर्ण गण।

अष्ट मंगल द्रव्य- 1. महाझारी, 2. कलश, 3. दर्पण, 4. पंखा, 5. ध्वजा, 6. चामर, 7. छत्र, 8. ठौना। ये आठ मंगल द्रव्य हैं। ये प्रत्येक मंगल द्रव्य 108/108प्रमाण होते हैं।

जिस समय तीर्थंकर भगवान उपदेशामृत द्वारा विश्व को मंगलमय करने के लिए मंगल विहार करते हैं, उस समय अष्ट मंगल द्रव्य को लेकर देव लोग मंगल सूचना स्वरूप आगे-आगे चलते हैं।

5. मोक्ष कल्याणक-तीर्थंकर भगवान् सत्य, अहिंसा, विश्वमैत्री का उपदेश करते हुए विभिन्न स्थानों में विहार करते हैं। अन्त में वे योग निरोध करके शुक्ल ध्यान रूपी अग्नि से शेष अघातिया कर्म नाश करके शरीर से भी मुक्त (रहित) होकर मोक्ष प्राप्त करते हैं। वे एक ही समय में 7 राजू गमन करके सिद्ध-शिला में विराजमान हो जाते हैं। वहाँ से पुनः संसार में वापिस नहीं जाते हैं। वहाँ पर ही वे शाश्वतिक सुख का अनुभव करते हुए अनन्त काल तक विराजमान रहते हैं।

श्री चौबीस तीर्थंकर

नाम	चिह्न	जन्म नगरी	पिता	माता	मोक्ष स्थान
1. वृषभनाथजी	वृषभ	अयोध्या	नाभिराय	मरूदेवी	कैलाश पर्वत
2. अजितनाथजी	गज	अयोध्या	जितशत्रु	विजय	सम्मेद शिखर
3. संभवनाथजी	अश्व	श्रावस्ती	जीतारिभ	सुसेना	सम्मेद शिखर
4. अभिनन्दनाथजी	बंदर	अयोध्या	संवर	सिद्धार्था	सम्मेद शिखर
5. सुमतिनाथजी	चकवा	अयोध्या	मेघप्रभ	मंगला	सम्मेद शिखर
6. पद्मप्रभुजी	पद्म	कौशाम्बी	धरण	सुसीमा	सम्मेद शिखर
7. सुपार्श्वनाथजी	नन्दावर्त	वाराणसी	सुप्रतिष्ठ	पृथिवी	सम्मेद शिखर
8. चन्द्रप्रभुजी	अर्धचन्द्र	चन्द्रपुर	महासेन	लक्ष्मीमति	सम्मेद शिखर
9. पुष्पदन्तजी	मगर	काकंदीपुर	सुग्रीव	रामा	सम्मेद शिखर
10. शीतलनाथजी	कल्पवृक्ष	भद्रिलपुर	दृढ़रथ	नन्दा	सम्मेद शिखर
11. श्रेयांसनाथजी	गैंडा	सिंहपुर	विष्णु	वेणुदेवी	सम्मेद शिखर
12. वासुपूज्यजी	भैंसा	चम्पापुर	वसुपुज्य	विजया	चम्पापुर
13. विमलनाथजी	शूकर	कंपिलापुरी	कृतवर्मा	जयश्यामा	सम्मेद शिखर
14. अनन्तनाथजी	सेही	अयोध्या	सिंहसेन	सर्वयशा	सम्मेद शिखर
15. धर्मनाथजी	वज्रदण्ड	रत्नपुर	भानु	सुव्रता	सम्मेद शिखर
16. शांतिनाथजी	हरिण	हस्तिनापुर	विश्वसेन	एरा	सम्मेद शिखर
17. कुन्थुनाथजी	छांग(बकर)	हस्तिनापुर	सूर्यसेन	श्रीमती	सम्मेद शिखर
18. अरनाथजी	मछली	हस्तिनापुर	सुदर्शन	मित्रा	सम्मेद शिखर
19. मल्लिनाथजी	कलश	मिथिला	कुम्भ	प्रभावती	सम्मेद शिखर
20. मुनिसुव्रतनाथजी	कछुआ	राजगृह	सुमित्र राज	पद्मा	सम्मेद शिखर
21. नमिनाथजी	नीलकमल	मिथिला	विजय नरेन्द	वप्रिला	सम्मेद शिखर
22. नेमिनाथजी	शंख	शौरीपुर	समुद्र विजय	शिवादेवी	उर्जन्त(गिरनार)
23. पार्श्वनाथजी	सर्प	वाराणसी	अश्वसेन	वामा	सम्मेद शिखर
24. वर्धमानजी	सिंह	कुण्डलपुर	सिद्धार्थ	प्रियकारिणी (त्रिशला)	सम्मेद शिखर

(परिच्छे 4) अभ्यास प्रश्न

1. तीर्थ किसे कहते हैं ?
2. तीर्थंकर किसे कहते हैं ?
3. तीर्थंकर बनने के लिये कितने कारण है, उनके नाम बताओ ?
4. दर्शन विशुद्धि के कितने अंग है, तथा उनके नाम बताओ ?
5. विनय सम्पन्नता किसे कहते हैं ?
6. प्रवचन भक्ति किसे कहते हैं ?
7. प्रवचन वात्सल्य किसे कहते हैं ?
8. पंच कल्याणक के नाम बताओ ?
9. जन्म के 10 अतिशय कौन-कौन से हैं ?
10. तीर्थंकर के लाञ्छन के बारे में कुछ बताओं ?
11. केवलज्ञान कल्याणक का वर्णन करो ?
12. केवलज्ञान के अतिशय कौन-कौन से हैं ?
13. तीर्थंकर कौन-कौन से दोष से रहित होते हैं ?
14. अष्ट महाप्रातिहार्य एवं अष्टमंगल द्रव्य कौन-कौन से हैं ?
15. इस परिच्छेद के कुछ श्लोक सुनाओ ?
16. तीर्थंकर पूज्य क्यों होते हैं ?

सत्य-तथ्य से सहित थोड़ा सा भी ज्ञान यथार्थ ज्ञान है। तथा सत्य-तथ्य से रहित प्रचुर ज्ञान भी अयथार्थ ज्ञान है। यथा थोड़ासा भी यथार्थ पानी तो पानी है परंतु प्रचुर मृग-मरीचिका (जलाभास) पानी नहीं है।

* * * * *

भव्य/योग्य मन-वचन-काय की प्रवृत्ति ही भद्रता/शालीनता है। इससे युक्त व्यक्ति सुगंध के समान है, जो दूसरों को भी आल्हादित कर देता है।

आ. श्री कनकनंदीजी गुरुदेव

परिच्छेद -5

24वें अन्तिम तीर्थंकर वर्द्धमान (महावीर)

प्रिय बच्चों ! अभी तक आप लोगों ने तीर्थंकर के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त कर ली। इस काल के अन्तिम तीर्थंकर भगवान् के बारे में जानकारी दे रहा हूँ। जिनका प्रचार भारतवर्ष में सबसे अधिक है। इसका कारण यह है कि महावीर भगवान् अन्य तीर्थंकरों की अपेक्षा काल की दृष्टि से अधिक निकट हैं। अभी उनके ही शासन काल में हम लोग निवास कर रहे हैं। इसका मतलब यह नहीं कि अन्य तीर्थंकरों का महत्त्व इनसे कम है। महावीर भगवान् ने धर्म के लिये जो कुछ किया था उससे कुछ कम अन्य तीर्थंकरों ने नहीं किया था। भारतीय विद्वान के साथ-साथ कुछ विदेशी मानते हैं कि जैन धर्म हिन्दू धर्म या बौद्ध धर्म की एक शाखा है एवं महावीर भगवान् ने जैन धर्म की स्थापना की थी। प्रिय बच्चो ! यह धारणा कोरी कल्पना है एवं भूल से भरी है। क्योंकि अभी-अभी आपने अध्ययन भी किया कि महावीर से कई करोड़ों, अरबों वर्ष पहले इस युग के प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ हुये एवं उनके बाद भी मध्य में 22 तीर्थंकर हुये। आदिनाथ तीर्थंकर के बारे में विशेष जानकारी के लिए मेरे द्वारा रचित 'युग निर्माता ऋषभदेव' 'तीर्थंकरों के बारे में विशेष जानकारी के लिये' 'क्रान्ति के अग्रदूत' और इतिहास की जानकारी के लिये 'विश्व इतिहास' का अध्ययन करें।

23 वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ के मोक्ष जाने के 250 वर्ष बाद एक महान् जीव पुष्पोत्तर विमान से आषाढ़ सुदी षष्ठी को च्युत होकर कुण्डलपुर के राजा सिद्धार्थ की रानी प्रियकारिणी (त्रिशला) के गर्भ में आया। यह महान् आत्मा आगे जाकर महावीर भगवान् बना। जब यह महान् आत्मा गर्भ में आया इसके छः महीने पहले ही इन्द्र ने कुबेर को आज्ञा देकर रत्नवृष्टि करवायी। यह रत्नवृष्टि लगातार जन्म तक होती रही। महावीर भगवान् ने चैत्र शुक्ल त्रयोदशी के उत्तरा फाल्गुन नक्षत्र में जन्म लिया। वह दिन ईसा पूर्व 599 या विक्रम पूर्व 542 था। इनका क्षत्रिय नाथ (ज्ञातृ) वंश था। इन्द्र ने जन्माभिषेक के समय में इनके अंगूठे में सिंह का चिह्न देखकर इनका लक्षण सिंह रखा। इनकी पूर्ण आयु 72 वर्ष की थी जिसमें से कुमार काल 30 वर्ष का था तथा तप काल 12 वर्ष एवं केवली काल 30 वर्ष का था। 7 हाथ प्रमाण शरीर और इनका शरीर-स्वर्ण वर्ण सा था।

महावीर भगवान् को जातिस्मरण होने के कारण ये संसार-शरीर-भोगों

से विरक्त हो गये। इसी कारण वे न विवाह बन्धन में पड़े और न राज्य शासन ही किया। जब वे विरक्त हो गये तब लौकान्तिक देवों ने आकर उनकी सराहना की। महावीर भगवान् को मनुष्य और देव एक सुन्दर पालकी में बैठाकर नाथ वन में ले गये। मंगसिर कृष्ण दशमी तिथि तथा उत्तरानक्षत्र के अपराह्नकाल में एक दिन का उपवास लेकर 'नमः सिद्धेभ्यः' का ध्यान करते हुए पंचमुष्ठी केशलोंच करके एकाकी दीक्षा ले ली।

यह दीक्षा दिवस 569 ई. पूर्व या 512 विक्रम पूर्व है। वे बारह वर्ष तक अखंड मौन लेकर आत्मसाधना में लीन रहे। उन्हें भी पार्श्वनाथ के समान अनेक उपसर्ग हुये।

आत्मध्यानी महावीर ध्यान से विचलित नहीं हुए। इस प्रकार 12 वर्ष की कठोर साधना के फलस्वरूप उन्हें ऋजुकूला नदी के तीर पर वैशाख शुक्ल दशमी के दिन तथा मघा नक्षत्र में लोकालोक को प्रकाशित करने वाला केवलज्ञान प्राप्त हुआ। यह दिन ई. पूर्व 557 या विक्रम पूर्व 500 था। उस कल्याणक को मनाने के लिए चतुर्निकाय देव आए और 1 योजन प्रमाण समवशरण की रचना की। इनके समवशरण में मनुष्य एवं देव के साथ पशु-पक्षी भी आकर धर्म श्रवण करते थे। इनकी धर्मसभा में इन्द्रभूति आदि ग्यारह गणधर थे। इनके समवशरण में 300 पूर्वधर, 9900 शिक्षक, 1300 अवधिज्ञानी, 700 केवली, 800 विक्रियाधारी, 500 विपुलमति, 400 वादी मुनि थे। इस प्रकार पूर्ण ऋषियों की संख्या 14000 थी। आर्यिकाओं की संख्या 36000 थी। आर्यिकाओं में मुख्य आर्यिका चन्दना थी। एक लाख श्रावक तथा तीन लाख श्राविकाये थीं।

महावीर भगवान् तीस वर्ष तक अंग, बंग, कलिंग, मगध, सौराष्ट्र, गुजरात आदि देश में विहार करते हुए 718 भाषा में जनता को सम्बोधित करते थे। जब वे विहार करते थे तब तक देव लोग उनके चरण के नीचे स्वर्ण कमल की रचना करते थे। महावीर भगवान् को जब केवलज्ञान हुआ तब उनका शरीर परमौदारिक शरीर हो गया। परमौदारिक का अर्थ है शरीर के रक्त, मांस, हड्डी आदि सप्त धातु एवं मल परिवर्तित होकर शुद्ध स्फटिक रूप में परिणमन कर लेना। केवलज्ञान होते ही वे पाँच हजार धनुष भूपृष्ठ से ऊपर उठ गये थे। उपदेश, विहार आदि 5000 धनुष ऊपर ही होता था। इनके समवशरण में गुह्यक यक्ष, सिद्धायनी यक्षिणी भक्तिभाव से रहते थे। मोक्ष जाने के दो दिन पूर्व ही उपदेश देना बन्द कर दिया और समवशरण का विघटन भी हो गया था। वे पावापुरी के पद्म सरोवर के

मध्य भाग में स्थित हुये। ई. पूर्व 527 या विक्रम पूर्व 470 कार्तिक कृष्ण अमावस्था के प्रत्यूष काल के स्वाति नक्षत्र में चारों अघाति कर्मों को नष्ट करके मोक्ष पधारे। जब महावीर भगवान् को मोक्ष प्राप्त हुआ तब गौतम गणधर को केवलज्ञान प्राप्त हुआ। मोक्ष कल्याण एवं गणधर का केवलज्ञान उत्सव मनाने के लिये दीप मालिका प्रज्वलित कर उत्सव मनाया। तब से ही दीपावली उत्सव प्रचलित हुआ जो वर्तमान में जैन व अजैन में यह उत्सव मनाया जाता है।

गौतम सिद्धार्थ (बुद्ध देव) का जन्म ईसा पूर्व 567 में होने के कारण भगवान् महावीर उनके समकालीन होने पर भी उनसे ज्येष्ठ थे। महावीर का जन्म, दीक्षा, केवलज्ञानादि बुद्ध से पहले होने के कारण स्वयं बुद्ध भी अनेक बार अपने शिष्यों के समक्ष महावीर भगवान् को सर्वज्ञ एवं सर्वदर्शी कहकर वर्णन किया जिसका वर्णन त्रिपिटक व बौद्ध साहित्य में अनेक जगहों में पाया जाता है। स्वयं बुद्ध महावीर भगवान् को एक स्वतंत्र धर्माचार्य, तीर्थंकर, धर्म प्रवर्तक मानने से यह सिद्ध होता है कि जैन धर्म एक स्वतंत्र धर्म है न कि हिन्दू या बौद्ध धर्म की शाखा।

वर्तमान में भी अनेक अजैन विद्वान व वैदेशिक विद्वान भी जैन धर्म को प्राचीन एवं स्वतंत्र धर्म मानने लगे हैं जिसका प्रमाण बौद्ध साहित्य, हिन्दू साहित्य, जैन सहित्य व प्राचीन अवशेष है।

(परिच्छेद 5 अभ्यास प्रश्न)

1. महावीर भगवान् का जन्म कहाँ हुआ था ?
2. महावीर के माता-पिता के नाम क्या हैं ?
3. महावीर कौनसे वंश के थे ?
4. महावीर की कितनी आयु थी ?
5. महावीर ने कितने वर्ष तक तप किया था ?
6. महावीर को कहाँ एवं कब केवलज्ञान प्राप्त हुआ था?
7. महावीर के कितने श्रावक एवं श्राविकाएँ थीं ?
8. महावीर के मुख्य गणधर कौन थे ?
9. महावीर के समान ही ज्ञानी उनके संघ में कितने थे?
10. महावीर के संघ में कितनी आर्यिकाएँ थीं ?
11. महावीर के संघ में कितने शिक्षक थे ?
12. दीपावली कब से एवं क्यों मनाई जाती है ?

परिच्छेद-6

दीपावली

जन-जन को आत्म-परमात्म को जोडने वाली कडी है - पर्व ।दीपावली भारत का एक महान् पर्व है। जैन धर्मानुसार भगवान् महावीर के निर्वाण /मोक्षगमन एवं गौतम गणधर के अनंत, अक्षय- केवलज्ञानरूपी ज्योति की उपलब्धि के उपलक्ष्य में देव एवं मनुष्यों ने रत्नदीप, घृतदीप प्रज्वलित करके उत्सव मनाया और भ. महावीर एवं सर्वज्ञ गौतम स्वामी की पूजा आराधना की, तब से दीपावली पर्व का प्रारंभ हुआ। इस उत्सव का मुख्य उद्देश्य मोक्षलक्ष्मी, आत्मवैभव, अनंतज्ञानरूपी आध्यात्मिक विद्या की उपलब्धि के लिए उसकी पूजा आराधना करना है। दीपमालिका का प्रज्वलन के रहस्य हैं 1) अनंत अक्षय ज्ञानरूपी प्रकाश की उपलब्धि तक ज्ञान की आराधना सतत करते रहना 2) ज्ञानरूपी प्रकाश के माध्यम से मोह अज्ञानरूपी अंधकार को दूर करना। निम्न में कुछ सविस्तार इसकी संस्कृति एवं विकृति का वर्णन प्रस्तुत है।

1) दीपमालिका की संस्कृति एवं विकृति :- दीपक ज्ञान का प्रतीक है। जिस प्रकार प्रज्वलित दीपक स्वयं प्रकाशित होता है एवं दूसरों को प्रकाशित करता है तथा अंधकार दूर करता है उसी प्रकार सम्यक् ज्ञान रूपी प्रकाश स्व- पर को प्रकाशित करता है एवं मोह- अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करता है। दीपक में रत्नदीपक या शुद्ध देशी घी का दीपक उचित माना गया है क्योंकि रत्न ज्योति से प्रदूषण नहीं होता है, तापमान नहीं बढता है, तथा घी के दीपक से प्रदूषण दूर होता है, दृष्टि शक्ति बढती है, अनेक रोग भी दूर होते हैं , जिसे अभी वैज्ञानिकों ने सिद्ध कर दिया है ।परंतु अभी आतिशबाजी करते हैं, जिससे शब्द प्रदूषण, वायू प्रदूषण, मृदा प्रदूषणादि के साथ-साथ करोडों- अरबों सूक्ष्म जीवों से लेकर पशु- पक्षी मनुष्य तक घायल, अपंग, मरण तक को प्राप्त हो जाते हैं, घर, दुकान आदि जलते हैं जिससे जान- माल की हानि होने के साथ-साथ प्रदूषण भी फैलता है। फटाके (आतिशबाजी) के निर्माण सामग्री के क्रय-विक्रय से भी धन-जन-श्रम, समय, साधन का जो दुरुपयोग होता है उसे अन्य रचनात्मक कार्य, परोपकार, दानादि में करके अधिक पुण्यार्जन, धनार्जन में कर सकते हैं। फटाके के कार्य में ज्यादातर नाबालिग कार्य करते हैं जिससे उनके शरीर, स्वास्थ्य, शिक्षादि के ऊपर गलत प्रभाव पडता है।

अनेकों की अग्निदाह, विस्फोट, रोगादि से मृत्यु भी हो जाती है। पशु- पक्षी मनुष्यों के गर्भपात से मरण भी हो जाता है। पटाखों से वायु प्रदूषण इस हदतक बढ जाता है कि व्यक्ति श्वास की बिमारियों से ग्रसित हो सकता है। विशेषज्ञ चिकित्सकों का कहना है कि यह प्रदूषण सल्फर नाईट्रेट, मैग्नीशियम, एल्यूमीनियम, कागज व अन्य सामग्री जलने से होता है। हृदय रोग विशेषज्ञों का कहना है कि इस समय वातावरण में ऑक्सीजन की कमी एवं अन्य जहरीली गैसों की मात्रा इस कदर बढ जाती है कि इससे श्वास लेने में दिक्कत आती है और अटैक पड जाता है।

सल्फर डाय-ऑक्साअड - दीवाली के बाद वायु में सल्फरडाइ-ऑक्साइड की मात्रा में करीब तिगुनी वृद्धि हो जाती है। यह वृद्धि काफी घातक होती है और इसका शिकार होनेवाले व्यक्ति की मृत्यु भी हो सकती है। सल्फर डायॉक्साइड की अधिक मात्रा नुकसानदायक होती है क्योंकि यह धीरे-धीरे सल्फेट कणों में बदल जाती है। ये कण इतने महीन होते हैं कि श्वसन के जरिए फेफडों तक पहुँच जाते हैं। वहाँ ये सल्फ्यूरिक अम्ल में बदल कर फेफडों को काफी क्षति पहुँचाते हैं।

कार्बन-मोनो-आक्साइड - दीवाली के बाद वायु में कार्बन मोनो-ऑक्साइड की मात्रा भी काफी बढ जाती है। इसके शरीर में पहूँचने पर रक्त में आक्सीजन् की मात्रा काफी कम हो जाती है। यह भी व्यक्ति की मौत का कारण बन सकता है। इसी तरह नाइट्रोजन डाइ-ऑक्साइड की मात्रा में भी वृद्धि हो जाती है। विशेषज्ञ चिकित्सकों का कहना है कि श्वसन तंत्र की नाक से लेकर फेफडों तक जानेवाली नली प्राकृतिक म्यूकोसीलियरी प्रणाली से सुरक्षित होती है, इसलिए स्वस्थ व्यक्ति पर तो वायु प्रदूषण का खास असर देखने में नहीं आता है लेकिन दिल व श्वास की बीमारियों से पीडित व्यक्तियों के साथ ऐसा नहीं है और उन्हें काफी तकलीफ होती है।

2) दीपावली पूजा की संस्कृति एवं विकृति :- दीपावली में भ. महावीर, गौतम स्वामी, मोक्ष लक्ष्मी, केवलज्ञान रूपी विद्या की पूजा मोक्ष, ज्ञान, आध्यात्मिक वैभव की उपलब्धि के उद्देश्य से की जाती है। निर्वाण लाडू पूर्णता, आत्मा की मधुरता, ज्ञानानंद की उपलब्धि के उद्देश्य से चढाया जाता है। इससे जीव में प्रसन्नता होती है, गुणी एवं गुण के प्रति पूज्यता का भाव होता है, लक्ष्य महान् होता है, जिससे पाप के संवर के साथ-साथ निर्जरा होती है,

सातिशय पुण्य बंध होता है जिससे इहलोक- परलोक के साथ-साथ ज्ञान, वैराग्य, वैभव प्राप्त होते हैं और परंपरा से अंत में स्वयं भ. महावीर के समान केवलज्ञान के साथ-साथ मोक्ष को प्राप्त करते हैं परंतु वर्तमान में अधिकांश जैन धर्मावलंबी भी रुपया- पैसा, दुकान का बहीखाता (कोई- कोई तो दो नम्बर का बहीखाता भी) की पूजा करते हैं।

3) दीपावली में प्रचलित भंयकर विकृति जिसका संबंध दीपावली से नहीं है :-पूर्व में वर्णित विकृतियों से भी और भी भंयकर, घातक विकृतियाँ दीपावली पर्व के दिनों में पर्व के नाम पर या धर्म के नाम पर प्रचलित हैं। वे विकृतियाँ हैं-जुआ खेलना, नशीली वस्तुओं का सेवन करना, मद्य पीना। कुछ लोगों की अंध मान्यता है कि इस समय में जुआ खेलना शुभ है। उनकी अंध श्रद्धा है कि दीपावली के समय पाण्डव जुआ में हारे थे अत: हारना भी शुभ है। कुछ की मान्यता है कि कुछ देवी- देवता नशीली वस्तू प्रयोग में लाते हैं और उनकी पूजा- आराधना इस समय शराब पीकर करने से वे देव प्रसन्न होंगे, वरदान प्रदान करेंगे, लाभ होगा, जीवन शुभ एवं सुखमय होगा। परंतु वास्तव में प्रत्येक देवी-देवता अमृतपान करते हैं। वे कभी भी नशीली वस्तु यहाँ तक कि मानव या पशु-पक्षी जो भोजन करते हैं वह सब भोजन-पानी ग्रहण नहीं करते हैं। मान लो यदि पाण्डवों ने जुआ खेला तो उन्होंने ऐसा करके धार्मिक, नैतिक, राजनैतिक या सामाजिक अच्छा कार्य नहीं किया अपितु इससे विपरीत कार्य किया। इतना ही नहीं, इसका कुफल उन्हें राज्य, द्रोपदी हारने के साथ-साथ अपमान, राज्यसभा में द्रोपदी का चीरहरण, तेरह वष के वनवास के रूप में प्राप्त हुआ। नशीली वस्तुओं के सेवन से तन-मन-धन, परिवार की बर्बादी के साथ-साथ पापबंध तथा अनादर, अपमान भी प्राप्त होते हैं। इस प्रकार आध्यात्मिक- ज्योति पर्व को प्रदूषण पर्व, अधर्म पर्व, अपव्यय पर्व, रोग पर्व, हिंसा पर्व, हत्या पर्व, फैशन-व्यसन पर्व, अंधश्रद्धा पर्व में विकृत कर रहे हैं। इसी प्रकार दीपावली को दीवालीया पर्व, होली को हंगामा पर्व, दशहरा को दहशत पर्व, गणेश चतुर्थी को चंदा वसूली पर्व के रूप में विकृत कर रहे हैं। बाजारवाद, फैशन-व्यसन, चमक- धमक के चक्कर में पर्व को पतित न बनायें। इन सब विकृतियों को दूर करके सच्ची संस्कृति, आध्यात्मिक ज्योति के रूप में मानना चाहिए, मनाना चाहिए, प्राप्त करना चाहिए।

परिच्छेद-7

आहार दान विधि

पड़गाहन

1. मुनियों के लिए पड़गाहन विधि-

हे स्वामीन्! नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु, अत्र,अत्र,अत्र,तिष्ठ,तिष्ठ,तिष्ठ आहार जल शुद्ध है।

2. आर्यिकाओं के लिए पड़गाहन विधि-

हे माता जी ! (आर्यिका श्री) वन्दामि, वन्दामि, (या नमोस्तु $_3$) अत्र, अत्र, अत्र, तिष्ठ, तिष्ठ आहार जल शुद्ध है।

3. क्षुल्लक, क्षुल्लिका, ऐलक के लिए पडगाहन विधि-

हे स्मामीन् जी ! इच्छामि $_3$, अत्र-$_3$, आहार जल शुद्ध है।

नोट-यह पड़गाहन विधि, जब तक साधु द्वार पर आकर नहीं रुके तब तक बोलते जाना चाहिए।

'पड़गाहन के बाद शुद्धि'

जब मुनिराज या माता जी की विधि मिलने के बाद आपके सामने खड़े हो जाते हैं तब तीन प्रदक्षिणा देना। उसके बाद 'नमोस्तु गुरुदेव मन शुद्धि, वचन शुद्धि, काय शुद्धि आहार जल शुद्ध है भोजनशाला में प्रवेश कीजिए कहें। भोजनशाला के पास गरम पानी से अपने पैरो को धोकर महाराज को भोजन गृह में प्रवेश करने के लिए अनुरोध करें। पुनः हे गुरुदेव! नमोस्तु उच्च आसन पर विराजमान होइये कहें। अनुरोध के पश्चात् चौके में साधु को उच्चासन पर बैठने के लिए आसान को उठाना चाहिए। साधु जिस स्थान को परिमार्जित कर लेते हैं वहां बिछाना चाहिए।

आसन पर विराजमान होने के बाद थाली में महाराज जी, माताजी तथा क्षुल्लक व ऐलक जी के पैर गरम पानी में धोकर गन्दोधक सिर में लगावें।

विशेष-माताजी (आर्यिकाओं) के लिए वन्दामि, या नमोस्तु एवं क्षुल्लक ऐलक के लिए इच्छामि कहें। तथा क्षुल्लक, ऐलक जी के पड़गाहन के बाद प्रदक्षिणा नहीं लगावें।

पूजा-विधि

थाली में चन्दन से निम्न श्लोक पढ़ते हुए स्वास्तिक बनायें।

श्लोक-रयणत्तयं च वंदे, चउवीस जिणे च सव्वदा वंदे।
पंचगुरुणां वंदे, चारण चरणं सदा वंदे ।।

आह्वान-'हे गुरुदेव, अत्र अवतर, अत्र अवतर, अत्र, अवतर, तिष्ठ, तिष्ठ, तिष्ठ मम सन्निहितो भव, भव वषट् स्वाहा' ऐसा कह कर पुष्प क्षेपण करें।

१. **जल**- ॐ ह्रीं श्री गुरुदेव चरणेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामिति स्वाहा।
२. **चन्दन**- ॐ ह्रीं श्री गुरुदेव चरणेभ्यो संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामिति स्वाहा।
३. **अक्षत**- ॐ ह्रीं श्री गुरुदेव चरणेभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतं निर्वपामिति स्वाहा।
४. **पुष्प**- ॐ ह्रीं श्री गुरुदेव चरणेभ्यो कामबाण विनाशनाय पुष्पं निर्वपामिति स्वाहा।
५. **नैवेद्य**- ॐ ह्रीं श्री गुरुदेव चरणेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्य निर्वपामिति स्वाहा।
६. **दीप**- ॐ ह्रीं श्री गुरुदेव चरणेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामिति स्वाहा।
७. **धूप**- ॐ ह्रीं श्री गुरुदेव चरणेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामिति स्वाहा।
८. **फल**- ॐ ह्रीं श्री गुरुदेव चरणेभ्यो मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामिति स्वाहा।

अर्घ्य- उदक चन्दन तन्दुल पुष्पकैः चरु सुदीप सुधूप फलार्घकैः।
धवल मंगल गान रवाकुले मम गृह मुनिराजमहंयजे ।।

ॐ ह्रीं गुरुदेव चरणेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामिति स्वाहा।

शांतिधारा, परिपुष्पांजलि क्षेपण करें एवं पंचाग नमस्कार करें। साधु के चौके में आने से पहले बर्तन में भोजन परोसकर के नहीं रखना चाहिए। पूजा के बाद थाली एवं कटोरी में रोटी दाल सब्जी आदि परोसकर पहले दिखायें। भोज्य पदार्थ हाथ में लेकर नहीं दिखाना चाहिए। थाली और बर्तनों के पास मुंह ले जाकर नहीं बोलना चाहिए। अन्यथा थूंक भोजन में गिर जाता है।

'आहार देने के लिए शुद्धि'

हे स्वामीन्! नमोस्तु मन शुद्धि, वचन शुद्धि, कायशुद्धि पूर्वक आहार जल शुद्ध है। अंजुलि जोड़कर मुद्रिका छोड़कर भोजनग्रहण कीजिए। फिर नमोस्तु कीजिए। गुरुदेव के मुद्रिका छोड़ने के बाद हाथ धुलावें।

भोजन-विधि एवं विशेष ध्यान देने योग्य बातें-

गुरुदेव श्री के खड़े होकर मंत्र बोलने के बाद पानी देने के बाद दूध दें। दूध के बाद पित्तशामक मिष्ठान्न व गरिष्ठ मेवे दें। इसके बाद भोजन दें। मध्य मध्य में थोड़ा-थोड़ा पानी भी दें। दूध के बाद खट्टी चीज एवं खट्टी चीज के बाद दूध नहीं दें। फलरस और फल के बाद पानी न दें। तथा पानी के बाद फलरस न दें। दूध के साथ या आगे या पीछे साग (भाजी) और नमकीन नहीं देना चाहिए। फल बनाने के पहले फलों को स्वच्छ पानी से धोवें। बनाने के बाद धोने से विटामिन नष्ट हो जाते हैं, खांसी हो जाती हैं एवं गला खराब हो जाता है। साबुत फल एवं बीज सहित फल नहीं देना चाहिए।

आहार क्रिया के समय हाथ-पैर, बर्तनादि को धोने के लिए शुद्ध गरम जल का ही प्रयोग करना चाहिए। आहार देते समय हाथ को शरीर या अशुद्ध वस्तु से स्पर्श नहीं करना चाहिए। साधु के चौके में जाने के बाद फल बनाना, भोजन बनाना आदि न करें। भक्ति करके अंजुलि जोड़ने के बाद पानी भोजनादि परोसना चाहिए। एक कायोत्सर्ग (9 बार णमोकार मंत्र बोलने जितने समय) तक हाथ खाली रहने से साधु भोजन त्याग कर देते हैं। बहुत कम या बहुत अधिक आहारादि न परोसें। भोजन देते समय बार-बार दूँ, वह दूँ, ऐसा पूछ-पूछ कर नहीं देना चाहिए। अर्थात् जिस भोजन का त्याग साधु का नहीं है वह भोजन जब तक साधु लेवें तब तक देते रहें। या अन्य भोजन देना है तो स्वयंमेव विवेक पूर्वक देना चाहिए।

आहार देते समय छीना-झपटी, हापा-धापी, गड़बड़, असावधानी व

शोर-शराबा, कलह, तनाव, अशांत, जल्दबाजी आदि नहीं होना चाहिए। विशेष आवश्यकता बिना अपना चौका छोड़कर दूसरों के चौके में नहीं जाना चाहिए। अनेक आहार देने वाले हों तो अलग-अलग भोजन की वस्तु लेकर रहना चाहिए। उस चीज का सेवन करने के बाद पुन: आहार देना चाहिए। न कि एक ही वस्तु को लेकर रहना चाहिए। जिस बर्तन में साधु का झूठन गिरता है उसमें मक्खी आदि जीवों को बैठने नहीं देना चाहिए। आहार दाता के हाथों में उंगलियों पर लम्बे-लम्बे नाखून नहीं होना चाहिए। हाथ गन्दा नहीं होना चाहिए। अच्छी तरह शरीर शुद्धि करना चाहिए एवं दन्त मंजन करके मुंह शुद्धि करना चाहिए, जिससे शरीर एवं मुंह से दुर्गन्ध नहीं आवे। चौका के प्रत्येक बर्तन को गर्म पानी से स्वच्छता से धोकर एवं स्वच्छ चौका के कपड़ों से पोछकर काम में लाना चाहिए।

चौका (भोजनशाल) शुद्धि-

चौका प्रकाश युक्त, सूखा, जीवों से रहित हो, ऊपर से स्वच्छ चंदवा तना हो, दुर्गन्ध से रहित, प्रशस्त हो।

भोजन शुद्धि-

कुएं का पानी छानकर लायें, उसी समय छनने की जीवाणि को कुंए में डालें। उस छने जल को गरम करें एवं उससे भोजन बनावें। हाथ की चक्की का आटा, शुद्ध दूध , मर्यादित घी होना चाहिए।

आहार देने वालों की शुद्धि-

पिण्ड शुद्धि - जाति, कुल, परम्परा शुद्ध हो। स्नान करके शुद्ध कपड़ा पहनकर के भोजन दें तथा पुरुष जनेऊ धारण करें। लिपिस्टीक, नेलपालिश, पाउडर, हिंसात्मक सौन्दर्य प्रसाधन का प्रयोग न करें। आहार देते समय काला कपड़ा, लाल, गीला, फटा, रेशमी, ऊनी आदि प्रकार के वस्त्र न पहनें। पुरुष वर्ग धोती दुपट्टा एवं स्त्री वर्ग साड़ी ब्लाउज पहनें। रजस्वला स्त्री चौका में न आवे तथा न चौके की वस्तु को स्पर्श करे।

सप्त व्यसन का त्याग - आहार देने वालों को अण्डा, मांस, मद्य, धूम्रपान, तम्बाकू का जीवन पर्यन्त त्याग अनिवार्य है। चार महीना से अधिक गर्भवती स्त्री आहार न दें।

त्याग - आलू, लहसनु, मूली, गाजर, प्याज आदि जमींकन्द का तथा रात्रि भोजन, अशुद्ध पानी, होटल की चीजें गोभी आदि का शक्ति अनुसार

त्याग करें। छानकर पानी पीवें, देव दर्शन नित्य करें। जनेऊ धारण करें।

आहार दान का फल-

आत्म विशुद्धि, धर्म प्रेम, गुरु-सेवा, लोभ की कमी, यश-प्राप्ति, पाप-नाश और पुण्य की प्राप्ति होती है एवं अन्त में मोक्ष प्राप्ति होती है।

'आहार-चीजों की मर्यादा'

	वर्षा ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	शीत ऋतु
1. दलिया, रवा, आटा, मैदा (मसाला) लाई आदि कुटे व गर्म किये।	3 दिन	5 दिन	7 दिन
2. मिठाई, खोवा, पेड़ा, बर्फी, लड्डू	1 दिन	1 दिन	1 दिन
3. बूरा, बताशा, बर्फी	6 दिन	15 दिन	30 दिन
4. पापड़, बड़ी, सेमियाँ, पूरी, पराठा, हलुआ, शाक, सेव, बूंदी, तेल आदि से तले हुए पदार्थ, आचार मुरब्बा, दहीं मट्ठा।	12 घंटे	12 घंटे	12 घंटे
5. खिचड़ी, दाल, भात, कढ़ी, रोटी	6 घंटे	6 घंटे	6 घंटे
6. घी, तेल।	1 वर्ष	1 वर्ष	1 वर्ष
7. सैधा लवण (पिसा हुआ)	48 मिनट	48 मिनट	48 मि.
8. (प्रसूत) बकरी भेड़ का दूध कब शुद्ध होता है ?	8 दिन बाद	8 दिन बाद	8 दिन बाद
(प्रसूत) भैस का दूध	15 दि.बाद	15 दि.बाद	15 दि.बाद
गाय का दूध	10 दि.बाद	10 दि.बाद	10 दि.बाद

अन्तराय - केश (बाल), मरा हुआ जीव, सचित्त बीज, नाखून, चर्म रक्त, मांस आहार में आने पर, मद्य, मांस देखने पर, शव देखने पर, अग्नि बुझने पर, मांस भक्षी-पशु पक्षी, मनुष्य, रजस्वला स्त्री के छूने पर, बर्तन गिरने पर, मनुष्य को चक्कर आकर गिरने पर, त्यागी हुई चीज एवं अभक्ष्य भक्षण होने पर, करुण रोने की आवाज सुनने पर, दूसरों को मारने पर, मार-काट आदि शब्द सुनने पर, पंचेन्द्रिय-जीव,चूहा-बिल्ली आदि पैर के बीच से निकलने पर तथा और भी अनेक कारण से अन्तराय हो जाता है।

हमारे संघ के कुछ विशेष नियम

हम विशेषत: बच्चों को सुसंस्कारित करने के लिए बच्चों से सप्त व्यसनादि सामान्य त्याग करवा करके उनसे आहार लेते हैं। संघ के साधु आहार में

मिर्ची, बेसन, तेल, खटाई (दही,मठ्ठा, इमली, अमचूर) उड़द, अरहर की दाल, ग्वार की फली, गैस, स्टोव से बना हुआ भोजन, मशीन का आटा, हैण्ड पम्पका पानी, अधपकी ककड़ी तथा सेंगरी आदि नहीं लेते हैं। गर्म किया हुआ ठण्डा पानी एवं ठण्डा दूध लेते हैं।

(परिच्छेद 7) अभ्यास प्रश्न

1. आहार दान की विधि बतलाईये ?
2. मुनियों को पड़गाहन किस प्रकार करना चाहिए?
3. आर्यिकाश्री को पड़गाहन किस प्रकार करना चाहिए?
4. क्षुल्लक, ऐलक को पड़गाहन किस प्रकार करना चाहिए?
5. पड़गाहन के बाद क्या करना चाहिए?
6. पूजन विधि बताईये ?
7. दो, तीन, पाँच, चौबीस का क्या अर्थ है ?
8. पूजन के पश्चात् क्या करना चाहिए ?
9. आहार दान किस प्रकार करना चाहिए ?
10. सर्वप्रथम गरिष्ठ आहार क्यों देना चाहिए ?
11. भोजन की शुद्धि किस प्रकार होनी चाहिए ?
12. चौका किस तरह होना चाहिए ?
13. आहार देने वालों की शुद्धि किस तरह होती है ?
14. आहार दान देने वालों को क्या-क्या त्याग करना चाहिए ?
15. अन्तराय. किन-किन कारणों से होता है?
16. आहार दान का फल बताओ ?
17. आहार दान सम्बंधी कथा सुनाओ ?
18. आहार दान सम्बंधी स्वय का अनुभव सुनाओ ?
19. गृहस्थ पुरुष धोती-दुपट्टा पहन कर तथा स्त्रियाँ साड़ी पहन कर आहार देवें ऐसा क्यों ?

परिच्छेद-8

'आदर्श जीवन'

व्यक्ति को प्रातःकाल दायें करवट को ऊपर करके प्रभु का स्मरण करते हुए उठना चाहिए। पूर्व या उत्तरदिशा की ओर मुँह करके पद्मासनादि में बैठकर अंजुलि को जोड़ना चाहिए। अंजुली में सिद्ध-शिला की स्थापना करके सिद्ध भगवान् का ध्यान तथा पंच परमेष्ठी का ध्यान करना चाहिए। णमोकार मंत्र या कोई उत्तम मंत्र जाप 9 या 27 अथवा 108 बार जाप करना चाहिये। माता-पितादि अभिभावकों के पैर छूकर प्रणाम (जय जिनेन्द्र) करना चाहिये। अन्य का भी यथायोग्य अभिवादन, सम्मान (हाथ जोड़कर जय जिनेन्द्र) करना चहिये। शौच क्रिया करके छने हुए जल से, मिट्टी से गुदा स्थान (मल द्वार) हाथ, पैर तीन-तीन बार धोना चाहिए। दातौन से दांत शुद्ध करना चाहिये। जिह्वा को भी साफ करना चाहिये। अच्छी तरह कुल्ला करना चाहिये। छने हुए जल का ही प्रयोग करना चाहिये। क्योंकि बिना छने जल में सूक्ष्म जीव होते हैं। स्नान में हिंसात्मक साबुनादि का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

स्नान के बाद शुद्ध वस्त्र पहन कर मंदिर जाना चाहिए। साथ में कुछ न कुछ शुद्ध पूजा-द्रव्य लेकर जाना चाहिये। 'देव दर्शन' परिच्छेद में वर्णित विधि के अनुसार देव दर्शन, पूजादि करना चाहिये। भगवान् के सामने पांच मुष्टि (पुंज) चांवल चढ़ाकर गवासन में बैठकर नमस्कार करना चाहिये। 'णमो अरिहंताणम्' बोलकर मध्य में पहला पुंज, 'णमो सिद्धाणं' बोलकर ऊपर में पुंज, 'णमो आइरियाणं' बोलकर दाये में पुजं, 'णमो उवज्झायाणं' बोलकर नीचे में पुंज, णमो लोए सव्व साहूणं बोलकर बायें में पुंज चढाना चाहिये।

साधु के सामने **सम्यग्दर्शनायनमः, सम्यग्ज्ञानाय नमः, सम्यग्चारित्राय नमः** बोलकर क्रम से 3 पुंज चढाना चाहिये। जिनवाणी के सामने क्रमशः **'प्रथमानुयोगाय नमः,'करणानुयोगाय नमः, चरणानुयोगाय नमः, द्रव्यानुयोगाय नमः'** बोलकर चार पुंज अक्षत चढाना चाहिये।

देवदर्शन के बाद विनय से विधि के अनुसार शास्त्र-स्वाध्याय करना चाहिये। शास्त्र के मध्य से कोई पृष्ठ निकाल कर यद्वा-तद्वा पढना नहीं चाहिये। सच्चे गुरु को **नमोस्तु** कहकर गवासन में बैठकर प्रणाम करना चाहिये। बैठते

समय मृदु वस्त्र से जीवों की रक्षा करते हुए बैठना चाहिये। आर्यिका को **वन्दामि** कहकर प्रणाम उपरोक्त विधि से करना चाहिये। ऐलक, क्षुल्लक, क्षुल्लिका को **इच्छामि** कहकर प्रणाम करें। ब्रह्मचारी को **वन्दना** कहकर प्रणाम करें। अन्य सामान्य व्यक्तियों को **जय जिनेन्द्र** कहकर यथायोग्य सम्मान करें। पूजादि करके मुनि आदि को भक्ति से विधि पूर्वक आहारादि देवे। आहार दान आहारदान विधि परिच्छेद के अनुसार दे। गृहपालिक पशु, सेवक, वृद्ध, माता,पिता, रोगी, दुखित को भोजनादि देकर स्वयं भोजन करें।

भोजन शुद्ध, सात्विक, ताजा, प्रासुक (मर्यादित) होना चाहिये। भोजन भूख लगने पर ही दिन में योग्य समय में सूर्य के पर्याप्त प्रकाश में करें। स्वच्छता से हाथ, पैर, मुंह धोकर कुल्ला कर पूर्व या उत्तर दिशा की और मुंह करके मन को शांत करके मौन पूर्वक प्रशस्त स्थान में भोजन करें। भात, रोटी आदि खाद्य को पीना चाहिये एवं पानी आदि पानीय को खाना चाहिये अर्थात् ठोस चीज को इतना चबाना चाहिये, जिससे भोजन पानी के जैसे पीने में आवे एवं पानी को धीरे-धीरे पीना चाहिये। भोजन को 32 दांत की संख्या बराबर चबाना चाहिये। पहले थोड़ा सा पानी (आचमन) पीना चाहिये। उसके बाद मीठा ठोस भोजन करना चाहिए। मध्य में नमकीन आदि भोजन करना चाहिये। मध्य-मध्य में थोड़ा-थोड़ा पानी पीना चहिये। पहले या अंत में ज्यादा पानी नहीं पीना चाहिये। विपरीत रस का सेवन नहीं करना चाहिए। जैसे-दूध के साथ या ठीक पहले या बाद में खट्टा रस, फल या फलरस के बाद पानी, शीतल भोजन या पानी के बाद गरम या गरम के बाद शीतल भोजन या पानी। भोजन के अंत में इलायची, सौंफ, लौंग सेवन करना चाहिये। किन्तु धूम्रपानादि नहीं करना चाहिये।

भोजन के बाद हाथ, पैर, मुंह अच्छी तरह से धोना चाहिये। भोजन के बाद हाथ को धोकर तथा हाथ को परस्पर में रगड़ कर दोनों आंख के ऊपर धीरे-धीरे से हाथ से रगड़ना चाहिये। इससे दृष्टि शक्ति, इन्द्रियों की शक्ति बढ़ती है। एवं रोग नहीं होता है। भोजन के बाद प्रभु स्मरण करके उठना चाहिये। शांत गंभीर मुद्रा में कुछ समय बैठना चाहिये। इसके अनन्तर 100 कदम धीरे-धीरे चलना चाहिये। भोजन के बाद मूत्रत्याग (पेशाब) करना चाहिये। भोजन के बाद कठिन कार्य, तेलमालिश, स्नानादि नहीं करना चाहिये। अनन्तर चित्त होकर (सीधे लेटकर) 9, दायें करवट एवं 18 बायें करवट 27 श्वासोच्छवास प्रमाण काल विश्राम करना चाहिये।

विश्राम के बाद योग्य अध्ययन, ध्यान-चर्या, लेखन, मनन, परोपकरादि कार्य करना चाहिये। गृहस्थ हो तो धर्मानुसार न्यायोचित मार्ग से अपना गृहस्थ व्यापारादि कार्य करना चाहिये। यदि गृहस्थ के व्यापारादि कार्य अन्यायपूर्ण उपाय से करते हैं तो अन्य मंदिरादि के धार्मिक कार्य केवल बाह्याडम्बर, ढोंग, रूढ़ि रह जाता है। धर्म तो सदा, सर्वदा, सर्वत्र धारण करने योग्य है, न कि केवल मंदिर में। मंदिर तो धर्मालय है जैसे-विद्यालय। विद्यालय में विद्या नहीं होती; वहाँ जाकर विद्या अध्ययन करते हैं एवं जीवन में उतारते हैं। वैसे ही धर्मालय में जाकर धर्म-अध्ययन करना है एवं जीवन के हर क्षण में हर कार्य में उतारना है।

पूर्ण जीवन का, वर्ष का, दिन का, घंटा का तथा प्रतिक्षण का उद्देश्य एवं कार्यक्रम होना चाहिए। जीवन का सर्वोपरि अंतिम लक्ष्य शाश्वतिक सुख, अनंतज्ञानादि ही होना चाहिए। उसको ही केन्द्र बिन्दु करके प्रत्येक कार्य होना चाहिए। निरुद्देश्य गमन केवल भटकाव है।

व्यर्थ में, समय, शक्ति, ज्ञान, धन, साधनादि का दुरुपयोग नहीं करना चाहिये। शक्ति के दुरुपयोग से विनाश है तो सदुपयोग से विकास। हर समय स्वयं को पवित्र, उदार, उदात्त कार्य में संलग्न रखना चाहिये। क्योंकि खाली मस्तिष्कर भूतों का डेरा बन जाता है। किसी की भी बात को या किसी भी विषय को बिना विचार किये, बिना निर्णय किये न स्वीकार करना चाहिये, न निंदा, प्रशंसा करना चाहिये। संशय से विनाश होता है परन्तु बिना परीक्षण निरीक्षण के विश्वास करने से भी विनाश होता है। संसार के अधिकांश प्राणी अधिकांशतः स्वार्थी, मोही, अज्ञानी, अन्धविश्वासी, रुढ़िवादी, लौकिकाचारी होते हैं। अतः सावधानी से, साम्यभाव से, साक्षीभाव से (तटस्थ भाव से) कार्य करना चाहिये। स्वयं यदि सत्यमार्ग में चल रहे हैं तो दूसरों से अप्रभावित होना चाहिये। दूसरों से प्रभावित होकर सत्य मार्ग का त्याग नहीं करना चाहिए क्योंकि सत्य ही सार्वभौम, सर्वशक्तिवान है।

प्रत्येक समय आत्म विश्लेषण, आत्म अन्वेषण, आत्मपरिशोधन करना चाहिये। भावों को लचीला, अभंगुर, निर्मल रखना चाहिए। दोष का परिज्ञान होते ही त्याग करने तथा गुणग्रहण का पुरुषार्थ करना चाहिए। छोटे से भी स्वकर्त्तव्य को समग्रता से, उत्तम विधि से करना चाहिये। वर्तमान का कर्त्तव्य अगले क्षण के लिए नहीं छोड़ना चाहिए।

जीवन को सदाचार, सत् विश्वास, सम्यक् ज्ञान, तेजस्वी व्यक्तित्व,

समयानुबद्ध, अनुशासित, कर्त्तव्यनिष्ठ, सत्यग्राही, निर्भय, निर्द्वन्द, निश्चल, निर्मल, सरल-सहज आदि गुणों से समुन्नत, महिमा मण्डित, गौरव पूर्ण बनाना चाहिये। जो व्यवहार स्वयं के लिए उचित न लगे, वह व्यवहार दूसरों के लिए भी न करें। स्व उपकार के साथ-साथ दूसरों का भी उपकार करें। यदि दूसरों का उपकार नहीं बन पा रहा है तो कम से कम अपकार नहीं करना चाहिए। प्यासे को संभव हो तो पानी पिलाओ, नहीं तो कम से कम विष तो मत पिलाओ।

कुछ क्षण भी प्रकाश देने वाला दीपक, उस दीपक से श्रेष्ठ है, जो चिरकाल तक केवल धुंआ देता है। वैसे ही प्रकाशमय छोटासा जीवन भी, उस जीवन से श्रेष्ठ है, जो चिरकाल तक केवल पाप का धुँआ फैलाता रहता है। अतः प्रत्येक प्राणी को आत्म दीपक एवं पर दीपक बनना चाहिये।

रात्रि को प्रभु स्मरण, आत्मरमण पूर्वक पूर्व, दक्षिण या पश्चिम दिशा की ओर सिर करके स्वच्छ, जीवों से रहित स्थान में विश्राम के लिये शयन करना चाहिये। शय्या समतल होनी चाहिये। शयन के पूर्व हाथ, पैर, मुंह धोकर शयन करना चाहिये। जब तक निद्रा नहीं आती है तब तक सत् चिंतन करना चाहिये। इससे निद्रा अच्छी आती है, दुःस्वप्न नहीं आते हैं। बायें करवट सोना चाहिये। सोते समय शरीर पर कसे हुए वस्त्र नहीं होना चाहिए तथा मुंह को पूर्ण ऊपर तक वस्त्र से ढ़ाँक कर नहीं सोना चाहिए।

उपरोक्त विधि से दैनिक कार्य करने वाला सुखमय जीवनयापन करता है।

(परिच्छेद 8) अभ्यास प्रश्न

1. प्रातः कालीन क्रियाओं का वर्णन करो ?
2. भोजन विधि का वर्णन करो ?
3. जीवन को आदर्शमय एवं सुखमय कैसे बना सकते हैं ?
4. शयन एवं जागने की विधि का वर्णन करो ?
5. दूसरों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये ?
6. अभिवादन कैसे करना चाहिए ?
7. जीवन का उद्देश्य क्या होना चाहिए ?

परिच्छेद-9

जैन धर्म प्रवेशिका

सम्यक् दर्शन पाठ

प्र. 1- प्रिय बच्चों ! आप क्या चाहते हो और दूसरें जीव भी क्या चाहते हैं ?

उत्तर- हम सुख शांति चाहते हैं एवं दूसरे जीव भी सुख शांति चाहते हैं।

प्र. 2- सुख शांति पूर्णरूपेण कहाँ मिलती है ?

उत्तर- सुख शांति पूर्णरूपेण मोक्ष में मिलती है।

प्र. 3- मोक्ष किसे कहते हैं एवं उसकी प्राप्ति के उपाय क्या हैं ?

उत्तर- समस्त कर्मों से मुक्त होना ही मोक्ष है एवं रत्नत्रय ही मोक्ष प्राप्ति के उपाय है।

प्र. 4- रत्नत्रय किसे कहते हैं ?

उत्तर- सम्यक्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक्चारित्र को रत्नत्रय कहते हैं।

प्र. 5- इसे रत्नत्रय क्यों कहते हैं ?

उत्तर- क्योंकि विश्व में सर्वश्रेष्ठ गुण होने से इसे रत्नत्रय कहते हैं।

प्र. 6- सम्यक्दर्शन किसे कहते हैं?

उत्तर- सत्य की प्रतीति/श्रद्धा या विश्वास को सम्यक्दर्शन कहते हैं।

प्र. ७- सत्य क्या है ?

उत्तर- वस्तु/द्रव्य का शुद्ध स्वरूप ही सत्य है या शुद्ध स्वरूप को प्राप्त करने का उपाय भी सत्य है।

प्र. 8- द्रव्य कितने हैं और उनके नाम क्या-क्या हैं ?

उत्तर- द्रव्य 6 हैं और उनके नाम हैं-(1) जीव द्रव्य (2) पुद्गल द्रव्य (3) धर्म द्रव्य (4) अधर्म द्रव्य (5) आकाश द्रव्य (6) काल द्रव्य।

प्र. 9- जीव द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर- जिसमें जानने, देखने, अनुभव करने के गुण हो उसको जीव द्रव्य कहते हैं।

प्र. 10- पुद्गल द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर- जिसमें स्पर्श, रस, गंध, वर्ण गुण पाये जाते हैं उसे पुद्गल द्रव्य कहते हैं।

प्र. 11- धर्म द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर- जो गति करते हुए जीव पुद्गल को गति के लिए उदासीन सहायक होता है उसे धर्म द्रव्य कहते हैं।

प्र. 12- अधर्म द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर- जो स्थित होते हुए जीव, पुद्गल को स्थित होने में उदासीन सहायक होता है उसे अधर्म द्रव्य कहते हैं।

प्र. 13-आकाश द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर- जो समस्त द्रव्यों को ठहरने के लिये अवकाश देता है उसे आकाश द्रव्य कहते हैं।

प्र. 14-काल द्रव्य किसे कहते हैं ?

उत्तर- जो समस्त द्रव्यों के परिणमन में सहायक होता है उसे काल द्रव्य कहते हैं।

प्र. 15-जीव दुःखी क्यों है और दुःख का कारण क्या है ?

उत्तर- जीव के खोटे भाव से जो कर्म का आस्रव एवं बंध होता है वही दुःख का कारण है।

प्र. 16-सुख प्राप्ति के उपाय क्या हैं ?

उत्तर- जीव के उत्तम परिणाम जिससे संवर, निर्जरा होती है एवं अंत में मोक्ष मिलता है वही सुख के उपाय हैं। इसी प्रकार आस्रव, बंध तो संसार या दुःख के लिए कारण हैं एवं संवर, निर्जरा, मोक्ष अथवा सुख के लिए कारण है। इसी प्रकार जीव, अजीव, आस्रव, बंध, संवर, निर्जरा, मोक्ष ऐसे सप्त तत्व हुए। आस्रव एवं बंध पुण्य तथा पाप रूप होते हैं इसीलिए पुण्य एवं पाप सप्त तत्वों में मिलाने से नव पदार्थ होते हैं।

प्र. 17-पुण्य किसे कहते हैं ?

उत्तर- जिससे जीव पवित्र होता है उसे पुण्य कहते हैं अथवा देव दर्शन, पूजा, गुरु सेवा, आहारदान,परोपकार, दया, करूणा, स्वधार्मिक कर्त्तव्य का पालन करना आदि पुण्य हैं।

प्र. 18-पुण्य से क्या लाभ है ?

उत्तर- पुण्य से भाव निर्मल होता है, अच्छी गति मिलती है, अच्छी बुद्धि, भावना होती है, मनुष्य जन्म मिलता है, स्वर्ग मिलता है, धन, वैभव, सम्पत्ति मिलती है, प्रशंसा होती है एवं अंत में मोक्ष मिलता है।

प्र. 19-पाप किसे कहते हैं ?

उत्तर- जिससे जीव का पतन हो, उत्तम कार्य करने के लिए भाव न बनें एवं दुःख मिले उसे पाप कहते हैं। हिंसा, चोरी, झूठ, कुशील, परिग्रह, क्रोध, झगड़ा, दूसरों को ठगना, भ्रष्टाचार आदि पाप हैं।

प्र. 20-पाप का फल क्या है ?

उत्तर- नरक, तिर्यंच गति मिलना, बुद्धि एवं भावना अच्छी नहीं मिलना, शारीरिक मानसिक कष्ट मिलना आदि पाप का फल है।

प्र. 21-आस्रव किसे कहते हैं ?

उत्तर- खोटे भाव से कर्म परमाणुओं का खिंच करके आना आस्रव है।

प्र. 22-बंध किसे कहते हैं ?

उत्तर- आये हुए कर्मों का आत्मा के साथ मिल जाना बंध है।

प्र. 23-संवर किसे कहते हैं ?

उत्तर- अच्छे भावों के कारण कर्मों का रूक जाना संवर हैं।

प्र. 24- निर्जरा किसे कहते हैं ?

उत्तर- अच्छे भावों से कर्मों का कुछ अंश में निकल जाना निर्जरा है।

प्र. 25-मोक्ष किसे कहते हैं ?

उत्तर- पवित्र भाव से संपूर्ण कर्म एक साथ निकल जाना मोक्ष है।

परिच्छेद-10

सम्यक् ज्ञान पाठ

प्र. 1- सम्यक् ज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर- सत्य की श्रद्धा (विश्वास) सहित जो ज्ञान होता है उसे सम्यक् ज्ञान कहते हैं।

प्र. 2- मिथ्याज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर- सत् विश्वास से रहित ज्ञान को मिथ्याज्ञान कहते हैं।

प्र. 3- सम्यक्ज्ञान के कितने भेद हैं ? एवं उसके नाम क्या-क्या हैं ?

उत्तर- सम्यक् ज्ञान के 5 भेद हैं। यथा (1) सुमति ज्ञान (2) सुश्रुत ज्ञान (3) सुअवधि ज्ञान (4) मनः पर्यय ज्ञान (5) केवल ज्ञान।

प्र. 4- मिथ्याज्ञान के भेद एवं नाम बताओ।

उत्तर- मिथ्या ज्ञान के तीन भेद हैं। यथा-(1) कुमति ज्ञान (2) कुश्रुत ज्ञान (3) कुअवधि ज्ञान।

प्र. 5 मतिज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर- पाँचों इन्द्रियों एवं मन से जो ज्ञान होता है उसे मति ज्ञान कहते हैं।

प्र. 6- श्रुत ज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर- मति ज्ञान के बाद जो विशेष ज्ञान होता है उसे श्रुत ज्ञान कहते हैं। या सुन करके अथवा श्रुत से जो ज्ञान होता है उसे श्रुत ज्ञान कहते है।

प्र. 7- अवधि ज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर अवधि ज्ञानावर्ण कर्म के क्षयोपशम से जो ज्ञान द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव

की सीमा लिए हुए होता है उसे अवधि ज्ञान कहते हैं।

प्र. 8- मनः पर्यय ज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर- दूसरों के मन में जो विचार उठते हैं उसका ज्ञान जिससे होता है, उसे मनः पर्यय ज्ञान कहते हैं।

प्र. 9- केवलज्ञान किसे कहते हैं ?

उत्तर- समस्त ज्ञानावरणी कर्म के क्षय से जो अनन्त ज्ञान होता है उसे केवल ज्ञान कहते हैं। केवलज्ञानी बिना पुस्तक उपदेश, प्रकाश, इन्द्रियाँ, मन, यंत्र से सब कुछ जानते हैं।

परिच्छेद-11

सम्यक् चारित्र पाठ

प्र. 1- सम्यक् चारित्र किसे कहते हैं ?

उत्तर- सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान पूर्वक जो पापों का त्याग किया जाता है तथा उत्तम कार्य किये जाते हैं उसे सम्यक् चारित्र कहते हैं।

प्र. 2- सम्यक् चारित्र के कितने भेद हैं और उसका पालन कौन करता है ?

उत्तर- सम्यक् चारित्र के दो भेद हैं। (1) देश चारित्र (2) सकल चारित्र। देश चारित्र श्रावक पालन करते है एवं सकल चारित्र मुनि पालन करते हैं।

प्र. 3- श्रावक देश चारित्र में जो पालन करता है उसे और भी क्या कहते हैं और उसका नाम बताओ ?

उत्तर- देश चारित्र में श्रावक जो पालन करता है उसे अणुव्रत कहते हैं। यथा- (1) अहिंसाणुव्रत (2) सत्याणुव्रत (3) अचौर्याणुव्रत (4) ब्रह्मचर्याणुव्रत (5) परिग्रहपरिमाणाणुव्रत।

प्र. 4- मुनि जो चारित्र पालन करते हैं उसे ओर भी क्या कहते हैं ? उसके नाम बताओं ?

उत्तर- मुनि जो चारित्र पालन करते हैं उसे महाव्रत कहते हैं-यथा (1) अहिंसा महाव्रत, (2) सत्य महाव्रत, (3) अचौर्य महाव्रत, (4) ब्रह्मचर्य महाव्रत, (5) अपरिग्रह महाव्रत।

प्र. 5- अहिंसा किसे कहते हैं ?

उत्तर- भाव को पवित्र रखना एवं दूसरों को मन, वचन, काय एवं व्यवहार से कष्ट नहीं पहुँचाना अहिंसा है।

प्र. 6- अहिंसा से क्या लाभ है ?

उत्तर- अहिंसा से भावों में प्रसन्नता एवं शांति होती है, दूसरे भी प्रसन्न रहते हैं,

पर्यावरण शुद्ध एवं सन्तुलित रहता है, परम्परा से स्वर्ग एवं मोक्ष भी मिलता है।

प्र. 7- सत्य से क्या लाभ है ?

उत्तर- सत्य से मन को शांति मिलती है, वचन में प्रामाणिकता आती है, झगड़ा, कलह वाद-विवाद नहीं होता है।

प्र. 8- अचौर्य किसे कहते हैं?

उत्तर- दूसरों की सम्पत्ति, कीर्ति को क्रमशः अपहरण नहीं करना, दूषित नहीं करना अचौर्य है।

प्र. 9- अचौर्य से क्या लाभ है ?

उत्तर- स्वयं को शांति मिलती है, दूसरों को कष्ट नहीं पहुँचता है।

प्र. 10- ब्रह्मचर्य किसे कहते हैं ?

उत्तर- मन, वचन एवं व्यवहार से कुशील का सेवन नहीं करना एवं शालीन-शिष्टता का व्यवहार करना ब्रह्मचर्य है।

प्र. 11- अपरिग्रह किसे कहते हैं ?

उत्तर- भौतिक सम्पत्ति के प्रति लालसा, तृष्णा नहीं रखना, अनुचित संग्रह नहीं करना अपरिग्रह है।

प्र. 12- अपरिग्रह से क्या लाभ है ?

उत्तर- मानसिक शांति मिलती है, दूसरों का शोषण नहीं होता हैं; गरीब- अमीर का भेदभाव मिटता है।

परिच्छेद-12

सामान्य ज्ञान प्रश्नोत्तरी

प्र. 1- पानी छानकर के क्यों प्रयोग किया जाता है ?

उत्तर- क्योंकि पानी में अनेक त्रस-स्थावर जीव बिना छने पानी में होते हैं। विज्ञान के अनुसार एक बिना छने हुए जल बिन्दु में 36450 त्रस जीव होते हैं। तथा जैन धर्म के अनुसार असंख्यात जीव होते हैं। इसलिए बिना छना पानी प्रयोग करने से उन जीवों की हत्या हो जाती है।

प्र. 2- रात्रि भोजन त्याग क्यों किया जाता है?

उत्तर- रात्रि में भोजन करने से सूर्य किरण के अभाव से जो अनेक कीट पतंग संचार करते हैं व उत्पन्न भी होते हैं। वे सब भोजन में गिरते हैं एवं भोजन

के साथ उनका भी भक्षण हो जाता हैं। जिससे जीव हिंसा के साथ-साथ अनेक रोग उत्पन्न भी होते हैं। सूर्य किरण के अभाव से भोजन सही रूप में नहीं पचता है जिससे अनेक रोग होते हैं।

प्र. 3- मद्य, माँस, सिगरेट, बीड़ी, गुटखा, चाय, कॉफी, आदि का सेवन क्यों नहीं करना चाहिए ?

उत्तर- मद्य में एल्कोहल विष, माँस में कोलेस्टरोल विष, बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू गुटखा, आदि में निकोटिन विष तथा चाय, कॉफी में कैफीन विष होने के कारण उसके सेवन से अनेक रोग होते हैं। बुद्धि, भावना एवं विचार शक्ति भी क्षीण एवं खराब होती है। इसके साथ-साथ अनेक जीवों की हत्या होती है। वातावरण प्रदूषित होता है इसलिए मद्य आदि का सेवन नहीं करना चाहिए।

प्र. 4- आलू, प्याज, लहसुन आदि जमीकंद क्यों नहीं खाना चाहिए ?

उत्तर- क्योंकि इन जमीकन्दों में अनंतानंत सूक्ष्म जीव होते हैं। इसके भक्षण से उन सूक्ष्म जीवों की मृत्यु हो जाती हैं। इसके साथ-साथ वनस्पति अपना भोजन इन कन्दों में संचित रखती हैं इसलिए इसके भक्षण से उनका संचित भोजन का भी अपहरण हो जाता हैं।

प्र. 5- चर्म की वस्तु, रेशमी वस्त्र, हिंसात्मक प्रसाधन सामग्री, यथा नेल पॉलिश, लिपस्टिक, शैम्पू, साबुन आदि का प्रयोग क्यों नहीं करना चाहिए ?

उत्तर- जीवों को मारकर उसके चर्म से जो चप्पल, बैग आदि बनाते हैं वह भी हिंसात्मक ही हैं। इसके साथ-साथ उस चर्म की वस्तु में भी जिस जीव के चर्म से वह वस्तु बनी है उस जातीय सूक्ष्म असंख्यात जीव जन्म लेते हैं एवं मरते हैं। 45000 रेशमी कीड़ों को उबालकर एक रेशमी साड़ी बनाते हैं। नेलपॉलिश, लिपस्टिक आदि भी जीवों के खून, चर्बी, हड्डी, माँस आदि से बनाते हैं इसलिए इन सबका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

6वीं कौन बनेगा ज्ञानवान प्रतियोगिता
(आयड़-उदयपुर-2005) का एक दृश्य।

आचार्य सुविधि सागरजी ससंघ को अगवानी करके ले आते हुए
आचार्य कनकनन्दी ससंघ तथा जैन श्रावक तथा हिन्दू श्रद्धालु
(गनोडा उदयपुर-2004)

आचार्य श्री द्वारा लिखित शोधपूर्ण ग्रंथ प्राप्ति के लिए संपर्क सूत्र :-

धर्म दर्शन सेवा संस्थान
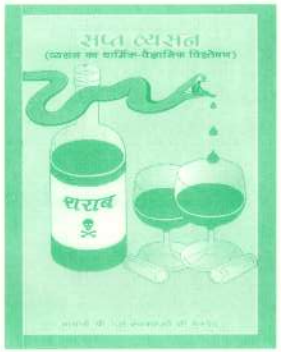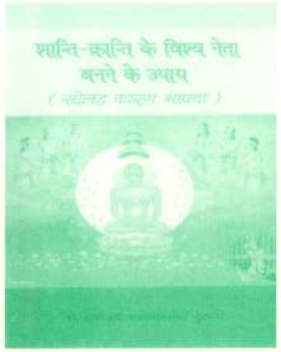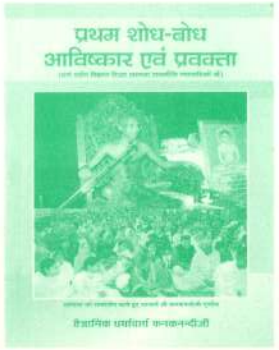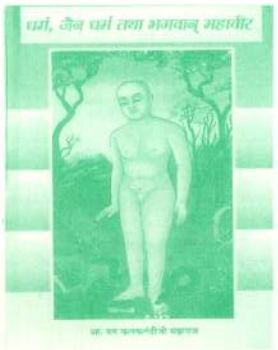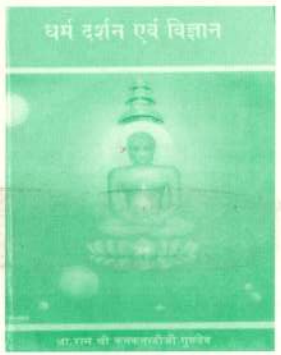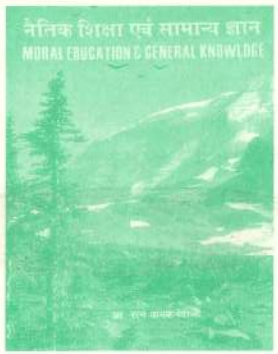
द्वारा :- श्री छोटूलाल जी चित्तौडा, चंद्रप्रभ दि. जैन मंदिर आयड,
आयड बस स्टॉप के पास, उदयपुर - 313001 (राज.)
फोन :- (0294) 2413565